महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६१ अंक : ०३

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: माघ कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

फरवरी प्रथम २०१९

अनुक्रम

०१. नया रहस्योद्घाटन : नेता जी....	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-२३	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. वैदिक कर्मफल व्यवस्था	कृष्ण चन्द्र गर्ग	१५
०५. संसार में शान्ति प्राप्त करने का...	उम्मेद सिंह विशारद	१७
०६. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		१९
०७. वेद क्या है?	वेदानन्द सरस्वती	२१
०८. परोपकारिणी सभा का स्थापना...	विरजानन्द दैवकरणि	२६
०९. कभी ऐसा भी हुआ था....	सोमेश पाठक	२८
१०. शङ्का समाधान- ४२	डॉ. वेदपाल	३०
११. इस साल की बात	प्रभाकर	३५
१२. लड़कपन के बूढ़े महात्मा नारायण...	प्रभाकर	३९
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

नया रहस्योद्घाटन :
नेता जी के भय से छोड़ा था अंग्रेजों ने भारत

यह एक ऐतिहासिक संयोग है कि जनवरी मास के उत्तरार्ध में भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन से जुड़े तीन स्मृति-दिवस आते हैं। २३ जनवरी को नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की जयन्ती है, २६ को गणतन्त्र दिवस है, और ३० को महात्मा गाँधी की पुण्यतिथि है। कुछ नये रहस्योद्घाटन होने से उनके अन्त:सम्बन्धों की चर्चा, विगत दिनों से ध्यानाकर्षण का विषय बनी हुई है। महात्मा गाँधी के भक्तों, अनुयायियों, पक्षधर सरकारों ने भारत की जनता को अब तक यह पढ़ाया, बताया और सुनाया है कि ''दे दी हमें आजादी बिना खड्ग बिना ढाल, साबरमती के सन्त तूने कर दिया कमाल।'' इसीलिए उनको 'राष्ट्रपिता' 'बापू' जैसी सम्मानित उपाधियों से महिमामंडित किया गया था।

जीवन में अनेक न्यूनताएँ होने के बाद भी, उनको दृष्टि-ओझल करके, किसी व्यक्ति को महिमामंडित करके महान् बना देना अनुयायियों की सक्रियता के अनुपात पर निर्भर है। यदि उसे राज्याश्रय मिल जाये तो यह कार्य अल्प श्रम में सम्पन्न हो जाता है। आजादी की बलिवेदी पर अनेक क्रान्तिकारियों और स्वतन्त्रता-सेनानियों ने भरी जवानी में अपने जीवन को होम दिया, किन्तु ख्याति उसे ही मिली जिसके अनुयायी अधिक थे, अथवा अधिक सक्रिय थे। इस लेख का उद्देश्य गाँधी जी के योगदान को कम करना नहीं है, अपितु इतिहास का यथार्थ मूल्यांकन करना है। नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने सैन्य गतिविधियों से ब्रिटिश साम्राज्य की चूलें हिला दी थीं, फिर भी वे गौण हो गये और महात्मा गाँधी को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया जैसे अंग्रेजी साम्राज्य को उखाड़ने वाले वही एकमात्र नायक थे। हालांकि आजादी के समय से लेकर आज तक साधारण जनता में यह प्रश्न उठता रहा है कि जिन अंग्रेजों ने भारत में आधिपत्य स्थापित करने के लिए क्रूरता की सारी सीमाएँ पार की थीं, जिन्होंने हजारों भारतीयों को फाँसी पर लटकाया, लाखों लोगों को यातनाएँ दी, देश को लूटा, शासन को स्थिर रखने के लिए अत्याचार पर अत्याचार किये, क्या वे अहिंसक आन्दोलन से डर गये और शासन को प्लेट में रखकर सौंप दिया? यह कैसे संभव है? ब्रिटेन ने द्वितीय विश्वयुद्ध भी जीत लिया था, भारत में संसद् भवन, राष्ट्रपति भवन जैसे भव्य भवनों का निर्माण भी कराया, यह सब भारतीयों के लिए तो हो नहीं सकता। फिर भी वे मनचाही सुविधापूर्वक क्यों निकल गये, और कैसे निकल गये?

वस्तुत: यह सब अंग्रेजों की कूटनीति थी। इसमें भी वे सफल रहे। इतिहास के नये रहस्य उजागर होने के बाद अब इन प्रश्नों का उत्तर मिलने लगा है और गत वर्षों में स्थापित धारणाएँ धवस्त होने जा रही हैं। ब्रिटिश सरकार की उजागर रिपोर्टें बताती हैं कि उसने अहिंसात्मक आन्दोलन से डरकर नहीं, अपितु नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा गठित 'आजाद हिन्द सेना' और उसके द्वारा उत्प्रेरित सेना-विद्रोह तथा जन-विद्रोह की सम्मिलित आशंका के भय के कारण भारत छोड़ने का निर्णय लिया था। विश्वयुद्ध में खस्ता हाल हुई ब्रिटिश सेना में न तो भारत से संघर्ष करने की क्षमता बची थी और न उसकी सेना में इच्छाशक्ति थी। उस समय भारत में केवल चालीस हजार ब्रिटिश सैनिक बचे थे जबकि भारतीय सैनिक और सेना-अधिकारी लाखों की संख्या में थे। भारतीय सेना को जब यह जानकारी मिली कि अंग्रेज अधिकारी आजाद हिन्द सेना के बन्दी सैनिकों को मुकदमा चलाकर फाँसी पर लटकाना चाहते हैं तो जल-सेना में विद्रोह भड़क गया। १८ फरवरी १९४६ को यह विद्रोह 'तलवार' नामक जहाज से प्रारम्भ हुआ और देखते-देखते अधिकांश जहाजों पर, सैनिक आवासों और प्रशिक्षण केन्द्रों में तथा बम्बई के क्षेत्रों में फैल गया। ब्रिटिश झण्डों को उतार फेंका गया। ब्रिटिश अधिकारियों ने किसी प्रकार इसको शान्त किया। ब्रिटेन की मिलिट्री इंटेलिजेंस ने ब्रिटिश संसद को रिपोर्ट भेजी कि 'अब भारतीय सेना पर भरोसा नहीं किया जा सकता।' उसके सम्भावित दुष्परिणामों की समीक्षा की गई और भारत छोड़ने की चर्चा का वातावरण निर्मित करके आशंकित खतरों को टाला गया। नौसैनिक विद्रोह में बन्दी होने वाले लेफ्टिनेन्ट कमाण्डर श्री बी.बी. मुतप्पा (८५ वर्षीय) ने १६ जून, २००५ को बी.बी.सी. संवाददाता सुनील रामन को एक साक्षात्कार में बताया था कि ''महात्मा गाँधी ने अंग्रेजों के विरुद्ध इस विद्रोह का समर्थन नहीं किया,

अपितु उलटा नौसेनिकों को ही अनुशासन में रहने को कहा। नेहरू ने भी स्वयं को इस विद्रोह से अलग कर लिया था।'' इस अलगाव का निहितार्थ पाठक स्वयं समझने का यत्न करें।

सैन्य इतिहासकार जनरल जी.डी. बक्शी ने अपनी पुस्तक **'बोस: एन इंडियन समुराई'** में रहस्योद्घाटन किया है कि **'भारत की आजादी के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने वाले ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमन्त्री क्लीमेंट रिचर्ड एटली ने कहा था कि ब्रिटिश शासन के लिए नेताजी सुभाषचन्द्र बोस सबसे बड़ी चुनौती थे। इसके मुकाबले में गाँधी जी का अहिंसात्मक आन्दोलन कम चुनौती भरा था।'** अर्थात् अंग्रेज मुख्यत: नेताजी से भयभीत थे।

इन्होंने अपनी उक्त पुस्तक में एक महत्त्वपूर्ण पत्र का उल्लेख भी किया है। यह पत्र पश्चिम बंगाल के तत्कालीन कार्यवाहक गवर्नर एवे कोलकाता उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस पी.बी. चक्रवर्ती ने आर.सी. मजूमदार लिखित पुस्तक 'ए हिस्ट्री ऑफ बंगाल' के प्रकाशक को लिखा था। वे लिखते हैं-

''जब मैं कार्यवाहक गवर्नर था तब (१९४५ में) लॉर्ड एटली, जिन्होंने भारत से ब्रिटिश शासन को हटाने का फैसला किया, अपने भारत दौरे के दौरान मेरे साथ दो दिन बिताये थे तब मेरी उनसे इस विषय पर विस्तार से चर्चा हुई कि किन कारणों से ब्रिटेन को भारत छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा। मैंने उनसे सीधा प्रश्न किया कि गाँधी जी द्वारा १९४२ में शुरु हुआ 'भारत छोड़ो आन्दोलन' अपनी धार खो रहा था। सन् १९४७ में कोई और बड़ी वजह भी दिखाई नहीं देती, फिर क्या कारण था कि एकाएक ब्रिटिश शासन ने भारत को आजाद करने का फैसला किया। जवाब में एटली ने कई कारण गिनाये लेकिन उन सब में सबसे मुख्य था भारतीय सेना और नौसेना में ब्रिटिश शासन के प्रति बढ़ता असन्तोष और अविश्वास। इस अविश्वास के भी बढ़ने का प्रमुख कारण नेता जी के सैन्य कार्य थे।'' **अर्थात् नेताजी के कारण भारत को आजादी मिली थी।**

इन महत्त्वपूर्ण पदाधिकारियों के महत्त्वपूर्ण रहस्योद्घाटनों से प्रमाणित हो गया है कि अंग्रेजों के भारत छोड़ने का कारण अहिंसक आन्दोलन नहीं था, अपितु नेता जी सुभाषचन्द्र बोस की सैन्य गतिविधियाँ और उनसे निर्मित वातावरण का भय था। उन्होंने भविष्य-चिन्तन कर लिया था कि अपमानित, पीड़ित और हानिपूर्वक जाने से अच्छा सम्मान और सुविधापूर्वक जाना है। १९४७ में अंग्रेजों को सम्मान और सुविधा देने को अनुकूल भारतीय राजनेता मिले हुए थे। उस अवसर का लाभ उठाना अंग्रेजों की दूरदर्शिता थी। आइये, तत्कालीन कुछ घटनाओं का विश्लेषण करते हैं।

अंग्रेजों को गाँधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलनों से भय न होने के दो प्रमुख कारण थे-उनके आन्दोलनों की ढुलमुल नीति और निरापद रवैया। इतिहास की घटनाएँ इस स्थिति को स्पष्ट कर देती हैं। सन् १९२० में गाँधी जी के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ। १९२२ तक यह चरम पर पहुँच गया और अंग्रेजी शासन की नींव हिलने लगी। इसी वर्ष एक सामान्य घटना यह घटित हुई कि संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) के चौरी-चौरा नामक स्थान पर आक्रोशित किसानों के एक समूह ने पुलिस स्टेशन पर आक्रमण करके उसमें आग लगा दी। उसमें कई पुलिस वाले हताहत हुए। इस एक घटना को हिंसा बताकर गाँधी जी ने पूरे देश का चरमोत्कर्ष पर पहुँचा हुआ आन्दोलन वापस ले लिया। अनेक इतिहासकारों का मानना है कि यदि यह आन्दोलन वापस नहीं लिया जाता तो उसी समय आजादी मिल जाती।

दूसरी घटना सन् १९४२ की है। 'भारत छोड़ो' उद्घोष के साथ एक बड़े आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ लेकिन इसको अंग्रेजों ने पूर्ण दमन के साथ कुचल दिया। फिर भी उत्साह इतना अधिक था कि वह उभर जाता था। बचे-खुचे को गाँधी जी ने अंग्रेजी हित साधने की सदिच्छा से रुकवा दिया और कहा कि हमें द्वितीय विश्वयुद्ध में अंग्रेजों का सहयोग करना चाहिये। आपस में हो रहे दमनकारी संघर्ष को भुलाकर शत्रु का सहयोग करना, कौनसी राजनीति है? यदि इस विश्वयुद्ध में ब्रिटेन का साथ न देकर उसी पर आक्रमण करते तो वह भारत से तो भाग ही जाता, अन्य देशों से भी हारने का सबक मिलता।

इस सन्दर्भ में विचारणीय बात यह है कि नेताजी सुभाष की आजाद हिन्द सेना अंग्रेजों के विरुद्ध भारत को आजाद कराने के लिए लड़ रही थी, जबकि उसके विपरीत गाँधी अंग्रेजों की सेना को सहयोग देने की बात कर रहे थे। इस प्रकार के सहयोग का अर्थ है ब्रिटिश सत्ता को सशक्त बनाना और भारत को गुलामी की जकड़न में लम्बे समय तक जकड़े रहना। वह समय १९४७ तक, और वास्तविकता में २६ जनवरी

१९५० तक खिंचता चला गया। सन् १९४७ में अहिंसक आन्दोलनों का नेतृत्व करने का अवसर और श्रेय गाँधी जी को मिला। वस्तुत: तब तक भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध क्रान्तिकारियों और नेताजी की सैन्य तथा महर्षि दयानन्द प्रेरित आर्यसमाज जैसे राष्ट्रभक्त संगठनों के कारण व्यापक एवं गम्भीर वातावरण बन चुका था। जिसका सीधा लाभ गाँधी जी को मिला। यह बात अलग है कि जिनके कारण उनके आन्दोलनों को वातावरण और शक्ति मिली उन क्रान्तिकारियों, संगठनों और नेताजी के प्रति गाँधी जी का उपेक्षा भाव रहा।

लोगों का मानना है कि यदि गाँधी जी बलपूर्वक अंग्रेजों के निर्णयों का विरोध करते तो भगतसिंह आदि क्रान्तिकारियों को फाँसी नहीं होती। फरवरी १९३१ से अंग्रेजी सरकार के साथ गाँधी जी की समझौता वार्ता चल रही थी। ५ मार्च १९३१ को गाँधी और वायसराय इरविन का समझौता हुआ था, जिसके अन्तर्गत गाँधी जी के आन्दोलनों में बन्दी बनाये गये कैदियों को छोड़ने का निर्णय हुआ, किन्तु गाँधी जी ने क्रान्तिकारियों को छोड़ने की बात नहीं की। २३ मार्च को भगतसिंह आदि को फाँसी दे दी गई। जनता ने गाँधी के विरुद्ध प्रदर्शन किये और यह आपत्ति की कि गाँधी जी ने केवल अपने पक्ष का ही समझौता क्यों किया और उन्हें क्रान्तिकारियों की फाँसी का जिम्मेदार घोषित किया। अपने विरुद्ध हुए आन्दोलनों के बाद गाँधी जी ने कुछ पत्रों द्वारा अपनी सफाई भी दी किन्तु उनसे जनता आज तक सन्तुष्ट नहीं है। ऐसे अन्य भी कई बिन्दु हैं। गाँधी जी के व्यवहार का विश्लेषण करने के बाद ज्ञात होता है कि जो उनके मतानुसार था, जो उनके हित में था, जो उनके लिए श्रेय देने वाला था, उसको वे आग्रहपूर्वक करते थे, चाहे उसका परिणाम कुछ भी निकले। धार्मिक आधार पर भारत और पाकिस्तान का विभाजन हुआ था। मुस्लिम जनसंख्या के अनुपात से पाकिस्तान को भूमि और धन का आवंटन हो गया। उसके बावजूद गाँधी जी की तुष्टीकरण की राजनीति ने मुस्लिमों को भारत में रोके रखा। तुष्टीकरण की उसी राजनीति का दुष्परिणाम यह निकला कि भारत आज ऐसे दोराहे पर खड़ा है कि उसे कोई स्पष्ट रास्ता नहीं सूझ रहा है। भविष्य की आशंका इतनी भयावह है कि उसमें इस देश का अधिकांश ध्वंस हो सकता है। विचारक गम्भीर चिन्तन करके देखें।

दक्षिण अफ्रीका से लौटकर गाँधी जी जब १९१५ में ८ अप्रैल को हरिद्वार में कुम्भ के दौरान गुरुकुल काँगड़ी में पधारे तो स्वामी श्रद्धानन्द जी (महात्मा मुंशीराम) के चरण-स्पर्श करके उनसे बड़े भाई के स्थान पर रहते हुए मार्गदर्शन करते रहने की प्रार्थना की। स्वामी जी ने उस प्रार्थना को स्वीकार करते हुए उनको 'महात्मा' की उपाधि प्रदान की, जिसके कारण आज वे जगद्विख्यात हैं। किन्तु राजनीति में स्थापित होते ही उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द को उपेक्षित कर दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा की जाने वाली शुद्धि-योजना का विरोध किया, किन्तु मुस्लिमों द्वारा किये जाने वाले हिन्दुओं के इस्लामीकरण पर कभी एक शब्द भी नहीं बोला। देश और समाज के हित में पाखण्डाधारित मत-मतान्तरों के असत्य को प्रकट करने और सत्य के स्वरूप को उजागर करने के कारण 'सत्यार्थप्रकाश' की आलोचना की जबकि काफ़िरों को क़त्ल करने का, गैर मुस्लिमों का वध करने का, जिहाद का, स्त्रियों के प्रति अन्यायपूर्ण प्रथाओं का आदेश देने वाली 'कुरान' और ईसाइयों के धर्मग्रन्थ 'बाइबिल' की कभी आलोचना नहीं की। यह पक्षपातपूर्ण रवैया नहीं था, तो क्या न्यायोचित था? यह भी एक राजनीति थी तुष्टीकरण की। इस तुष्टीकरण से गाँधी जी को क्या लाभ हुआ और हिन्दुओं की क्या हानि हुई, यह विचारणीय है।

सन् १९३८-३९ में गाँधी जी के मनपसन्द प्रत्याशी को हराकर नेता जी सुभाषचन्द्र बोस काँग्रेस अध्यक्ष बन गये, क्योंकि वे मन के अनुकूल नहीं थे, अत: गाँधी जी ने नेताजी को काँग्रेस अध्यक्ष पद से त्याग-पत्र देने के लिए बाध्य कर दिया। आज प्रकट हुए तथ्यों ने यह स्पष्ट कर दिया कि आजादी मिलने के मुख्य कारण नेताजी ही थे। इसका अभिप्राय यह है कि यदि नेताजी का सैनिक संघर्ष नहीं होता तो पता नहीं भारत को आजादी कब मिलती। गाँधी जी और पं. नेहरू के कारण नेताजी को यथोचित सम्मान नहीं मिल पाया।

दूसरा उदाहरण है कि प्रधानमन्त्री का चयन करने के समय पूर्ण बहुमत प्राप्त सरदार पटेल की उपेक्षा करके शून्य मत वाले अपने मनपसन्द पं. नेहरू को प्रधानमन्त्री बनाना। यदि लोकतान्त्रिक तरीके से चयनित और भारतीयता से संस्कारित पटेल प्रधानमन्त्री बनते तो देश की स्थिति अधिक सुखद होती। ऐसा अनुमान है कि इसकी पृष्ठभूमि में भी अंग्रेजों की कूटनीति थी, क्योंकि नेहरू के वायसराय-परिवार के साथ

शेष भाग पृष्ठ संख्या ४१ पर.....

मृत्यु सूक्त-२३

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। - सम्पादक

मृत्यो पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।।

इस वेद-ज्ञान की चर्चा के प्रसंग में ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८ वें सूक्त की चर्चा में आज की चर्चा का विषय दूसरा मन्त्र है। इसका ऋषि यामायनः, देवता मृत्यु और छन्द त्रिष्टुप है। शब्दावली बहुत सरल है और सरल होने के साथ-साथ, मृत्यु के कारण और निवारण, दोनों की बड़े सहज शब्दों में इसमें चर्चा है। वो कहता है, **'मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत'** मृत्यु के कारण को पृथक् करते हुए, **द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः** -आयु को **द्राघीय**-दीर्घ भी बनाना है और **'प्रतरम्** अच्छा, श्रेष्ठ' धारण करते हुए।

हमें चाहिए क्या? हमें लम्बी आयु चाहिए और हमें अच्छी आयु चाहिए। जैसे पीछे बताया था कि आयुर्वेद जब चर्चा करता है तो उसमें आयु के चार भाग बताए थे- **हिताहितम्, सुखम्, दुःखम्, आयुस्तस्य हिताहितम्**। एक प्रयोजनवान आयु, हितकर आयु, परिणाम को प्राप्त होने वाली आयु। या तो आदमी हित-आयु हो सकता है या अहित-आयु हो सकता है। जीया तो बहुत है लेकिन किसी प्रयोजन को सिद्ध नहीं कर सका। प्रयोजन तो सिद्ध हुआ लेकिन कष्ट बहुत पाया या बिना कष्ट के ही सब काम हो गया। तो चार भेद किए-**हित- आयु, अहित-आयु, सुख-आयु, दुःख-आयु**। हमारी आयु की चार परिस्थितियाँ हो सकती हैं और इन चार परिस्थितियों में हमारा प्रयत्न है कि आयु सुखायु हो और हितायु हो। हमारा जीवन सुखपूर्ण हो, विघ्न-बाधाओं से रहित हो और प्रयोजनवाला भी हो। हमारे प्रयोजन की सिद्धि करने वाला भी हो, हमारे जीवन की सार्थकता भी हो। ये दो चीजें हमें अपने जीवन में प्राप्त होनी चाहिएँ, इसलिए यहाँ पर कहा-**योपयन्तः**, यहाँ जो क्रिया है, वह यह बता रही है कि यह होने वाला, सदा होते रहने वाला काम है। मतलब, आप जब चाहें अपने को संभाल सकते हैं।

हमारे जीवन का सबसे बड़ा संकट है कि हम जो कर रहे हैं उसका परिणाम हम बहुत सोच नहीं पाते। संकट क्या है?-इन्द्रियों को जो अच्छा लगता है वो शरीर के परिणाम में अच्छा नहीं है और इन्द्रियों को अच्छा न लगे तो हम उसका उपयोग करना भी नहीं चाहेंगे। इस ऊहापोह में, इस सोच-विचार में हम परिणाम को छोड़ देते हैं, भूल जाते हैं और जो इन्द्रियों को अच्छा लगता है उसके काम में रह जाते हैं और इसलिए हम उसको 'सुख' भी कहते हैं। संस्कृत में **'ख'** इन्द्रियों को कहा गया है, **'खानि इन्द्रियाणि'**। इन्द्रियों को अच्छा लगता है, इसलिए उसे सुख कहते हैं। वो जो अच्छे की अनुभूति है, जो सुख की अनुभूति है, उसका संकट यह है कि वह प्रारम्भ में हमें अच्छा जरूर लगता है किन्तु परिणाम में वह अच्छा नहीं हो पाता, इसलिए सुख के भी तीन भेद किए हैं। श्री कृष्ण ने गीता में सुख का सात्त्विक भेद, राजसिक भेद व तामसिक भेद किया है। **यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्, तत्सुखं सात्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धि-प्रसादजम्**-उन्होंने कहा कि हमें जैसा अनुभव होता है, वैसा परिणाम नहीं होता और बहुत बार जैसा परिणाम मिलता है वैसा अनुभव नहीं होता। हमें दोनों में से चुनना है, हम क्या चाहते हैं। हमने एक परीक्षा २० साल की आयु में उत्तीर्ण की, लेकिन उस उत्तीर्णता का लाभ हम यावत् जीवन पाते रहते हैं, यह उसका परिणाम है। हमारे अन्दर जो सोचने की क्षमता है

वो इस विवेक के साथ होनी चाहिए कि जो हम कर रहे हैं, इसका वर्तमान क्या है और इसका भविष्य क्या है, इसकी प्रक्रिया क्या है और इसका परिणाम क्या है? संसार में सामान्य नियम है, जो इन्द्रियों को अच्छा लगता है, हमारी प्रवृत्ति सहज उधर हो जाती है, लेकिन यह पहचान है कि हम विवेक से काम नहीं कर रहे हैं, इन्द्रियों के स्वभाव से कर रहे हैं। इन्द्रियों का स्वभाव है कि जो उनको अच्छा लगता है वह उसमें जाती हैं, उसका परिणाम क्या होता है, यह सोचना इन्द्रियों का काम नहीं है। सोचने का काम तो बुद्धि का है। इन्द्रियाँ भले ही विषयों को चाहें, लेकिन मनुष्य अपनी इन्द्रियों को रोक लेता है, क्योंकि उसको परिणाम की चिन्ता सताने लगती है। जब व्यक्ति का बौद्धिक सामर्थ्य कम होता है और वो इन्द्रियों के वशीभूत होता है तो वह अपने को रोक नहीं पाता। उसे जो देखना अच्छा लगता है, वो देखता है, जो खाना अच्छा लगता है वो खाता है, जो करना अच्छा लगता है वो करता है। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श हमें हर समय अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं। हमको देखना तो आवश्यक है लेकिन सदा उचित-अनुचित से हमें नियन्त्रण करना पड़ता है। देखना तो इन्द्रियों का काम है, लेकिन क्या देखना, क्या नहीं देखना, कब देखना, कब नहीं देखना, यह इन्द्रियों का विषय नहीं है। यह हमारी बुद्धि का काम है, यह हमारे विवेक का काम है और इसलिए इन्द्रियों से जो हमें अच्छा लगता है, उतने मात्र से हमें सन्तोष नहीं करना है, उतने मात्र को स्वीकार नहीं करना है। इसलिए कहा गया-**यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्**।

एक बच्चे को हम पढ़ाई करने के लिए कहते हैं, पढ़ने में बहुत परिश्रम लगता है, खेलने से मन हटाना पड़ता है। इन्द्रियों की प्रवृत्ति इस ओर नहीं होती, लेकिन अपनी समझ से, दूसरों की प्रेरणा से, माता-पिता के भय से हम किसी काम को करते हैं तो वह काम हमें असुविधाजनक लगता है, कष्टप्रद लगता है। लेकिन एक समय आता है, तब हमें ऐसा दिखाई देता है कि कितना अच्छा हुआ कि वह काम हमने कर लिया, समय से कर लिया। जो नहीं कर पाते उनके लिए वही बात दु:खद होती है। एक आदमी को मिठाई बहुत अच्छी लगती है, वो अपने को रोक नहीं सकता, खाता है, लेकिन फिर रोगी हो जाता है, मधुमेह का शिकार हो जाता है। रोग के कारण शरीर की सारी इन्द्रियाँ शिथिल, असमर्थ हो जाती हैं, उसको वह सहन करने के लिए बाध्य है क्योंकि हमने उस समय अपने विवेक को काम में नहीं लिया। कुछ काम न शुरु में अच्छे होते, न परिणाम में अच्छे होते, वो तामसिक वृत्ति के होते हैं। **यदग्रे चानुबन्धे च**, जो अपने लिये इस समय भी अच्छे नहीं है, बाद में भी अच्छे नहीं है वो तामस कोटि के काम हैं-निद्रा, आलस्य, प्रमाद। अब अच्छा लगकर बाद में खराब लगना, अब खराब लगकर बाद में अच्छा लगना, न अब अच्छा लगना न बाद में अच्छा लगना, ये तीनों परिस्थितियाँ हो सकती हैं, होती हैं, प्रत्येक के साथ होती हैं, इसलिए हमको हर समय, जो चीज इन्द्रियों से हम इच्छा करते हैं, पाना चाहते हैं, उस पर निरन्तर विचार करने की आवश्यकता है।

इसलिए मन्त्र में जो एक शब्द आया है-**मृत्यो: पदं योपयन्त:** मतलब मृत्यु कारण से हो रही है, अकारण नहीं हो रही है। जन्म भी कारण से था। यदि जन्म कारण से है तो मृत्यु अकारण कैसे हो सकती है? और मृत्यु में शीघ्रता, विलम्ब, कम, ज्यादा होता हुआ हम देखते हैं, वो बिना कारण कैसे हो सकता है? किसी की मृत्यु जल्दी हई उसका भी कारण होगा, किसी की मृत्यु देर में हुई उसका भी कारण होगा। मृत्यु जल्दी और देर में होती है तो इसका मतलब कारण है और कारण के अनुसार उसको देर से किया जा सकता है। यह हमारे आधीन है। हम उसको आगे और पीछे कर सकते हैं, इसको बढ़ा और घटा सकते हैं और यह कोई एक दिन की, एक समय की, एक व्यक्ति की बात नहीं है, जो भी व्यक्ति इसके लिए प्रयत्न करेगा, उसे इसका फल, इसका परिणाम अवश्य प्राप्त होगा।

हम अपनी आयु को बढ़ा सकते हैं। हमें वैसे कारण पैदा करने पड़ेंगे। उस मृत्यु को दूर हटा सकते हैं। मृत्यु के जो स्थान हैं, उनको समाप्त करते हुए, हटाते हुए, दूर करते हुए, हमें आगे बढ़ना है। हमारी आयु को हम लम्बा करने वाले हों, बड़ा करने वाले हों। **द्राघीय आयु: प्रतरं दधाना:** और इसमें केवल आयु को लम्बा करने की बात नहीं

कही, **प्रतरम्** एक विशेष शब्द है। वो कहता है प्रकृष्टतर, श्रेष्ठ, श्रेष्ठ से भी अच्छा। हम आयु को, यदि वह खराब है तो अच्छा भी बना सकते हैं। अच्छी है तो उपेक्षा से खराब भी कर सकते हैं। हमारे सुख और दु:ख, हमारा हित और अहित उसका बहुत कुछ हमारे हाथ में है, हमारे नियन्त्रण में है। उस पर बड़ा नियन्त्रण तो परमेश्वर का है, व्यवस्था का है। मनुष्य का जन्म दिया, मनुष्य का शरीर दिया, माता-पिता दिये, देश-परिस्थिति दी, हम अपने आचरण से, अपने भोजन से, छादन से, विचार से, व्यवहार से, उसका जो लाभ उठा सकते हैं, उसमें जो अच्छा कर सकते हैं, वह हमारे हाथ में है। इसलिए यहाँ कहा-**द्राघीय आयु: प्रतंर दधाना:**। हम अपनी आयु को लम्बा भी करें और आयु को अच्छा भी करें, जिसे आयुर्वेद की भाषा में हमने कहा था हितायु और सुखायु।

आयु हमारे लिए सुखपूर्ण भी होनी चाहिए और आयु हमारे लिए हितकर, प्रयोजनपूर्ण भी होनी चाहिए। जो बात आयुर्वेद का सूत्र कह रहा है, वही बात इस मन्त्र में भी कही गई है। इसलिए ही आयुर्वेद इसका उपवेद है। अर्थात् आयु का वेद है। आयु का वेद आयुर्वेद है। आयु का वेद होने से यहाँ पर वही बात कही गई है-**मृत्यो: पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयु: प्रतंर दधाना:**। **हमारा जो प्रयत्न है, हमारा जो पुरुषार्थ है, वो ऐसा होना चाहिए कि हम अपनी मृत्यु को दूर कर सकें, पीछे धकेल सकें और उसके कारण से हमारी आयु दीर्घ हो सके, लम्बी हो सके और केवल लम्बी न हो, हम केवल वर्षों में जीने वाले न हों, किन्तु 'प्रतरम्' हमारी आयु सक्रियता की आयु होनी चाहिए, श्रेष्ठता की आयु होनी चाहिए, प्रयोजन को सिद्ध करने वाली आयु होनी चाहिए।** इसलिए इस मन्त्र के इन शब्दों में विशेष बात कही गई है। **प्रतरं दधाना:**, प्रकृष्ट करने के लिए। इस मन्त्र पर जब हम विचार करेंगे तो इसकी श्रेष्ठता का हमें पता चलेगा।

आवश्यक सूचना

परोपकारी (पाक्षिक) का नवनिर्धारित शुल्क

(१ फरवरी २०१९ से लागू)

एक वर्ष	–	३०० रु.
पाँच वर्ष	–	१२०० रु.
आजीवन	–	३००० रु.

विशेष – विदेश के लिए पूर्व निर्धारित शुल्क ही मान्य रहेगा।

वार्षिक	–	५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक	–	९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक	–	१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन	–	५०० पाउण्ड/८०० डॉलर

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

पं. लेखराम जी के बेजोड़ तर्क- मन में विचार आया है कि लम्बे समय तक स्तम्भ में गौरव-गिरि पं. लेखराम जी के बेजोड़ तर्क पाठकों की सेवा में क्रमशः दिये जावें। पौराणिक हिन्दू तथा ईसाई, मुसलमान परकीय मतावलम्बी लोग स्त्रियों को हीन मानते हैं। हिन्दू वैसे तो कन्या-पूजन तथा जगन्माता (दुर्गा) की दुहाई देते हैं, परन्तु शंकराचार्य निरञ्जनदेव तीर्थ ने एक सभा में एक आर्य देवी को गायत्री मन्त्र के पाठ से रोका था। 'कल्याण' में उसका ओ३म् के जप के खण्डन में एक जोरदार लेख छपा। एक भी हिन्दू संस्था व नेता ने उसको ललकारा नहीं था। आर्यसमाज ने देश भर में उसका प्रतिवाद किया था। उसने तब एक अनूठा तर्क दिया था कि ओ३म् केवल है केवल ही कर देगा अर्थात् ओ३म् का कोई बाल-बच्चा नहीं, उसका जप करने से सारा परिवार मर जावेगा। स्त्रियाँ विधवा हो जावेंगी।

तब 'आर्यगज़ट उर्दू' में इन पंक्तियों के लेखक ने रोहतक में इस विषय में शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी थी। अब हिन्दुओं की सोच क्या है, यह तो उ.प्र. के मान्य मुख्यमन्त्री ही बता सकते हैं। एक समय था जब पूरे देश में अस्पृश्यता के विरुद्ध युद्ध छेड़ने पर आर्यों के सिर फोड़े जा रहे थे, हत्यायें की जा रही थीं और प्रचण्ड बहिष्कार हो रहे थे, तब पं. लेखराम जी से लेकर छोटे-छोटे ग्रामीण समाजों के मन्त्री, प्रधान अस्पृश्यता के खण्डन में अपना-अपना तर्क दे रहे थे, परन्तु पं. लेखराम जी के एक बेजोड़ तर्क जैसा तर्क तो पढ़ने-सुनने में आया ही नहीं।

प्राणवीर पं. लेखराम जी ने कहा कि पुराण स्त्री को शूद्र मानते हैं। शंकराचार्य का मत कौन नहीं जानता? सब हिन्दू-परिवारों में स्त्रियाँ ही भोजन बनाती हैं। उन्हें आपके पुराण शूद्र बताते हैं। आप भंगी, चमार आदि को शूद्र मानकर अस्पृश्यता के ध्वजवाहक बने बैठे हो। आपकी अस्पृश्यता की निरर्थकता तो आपके घरों में देखी जा सकती है। पं. लेखराम के इस तर्क ने बड़े-बड़े तिलकधारियों के छक्के छुड़ा दिये। पं. लेखराम जी वाला तर्क किसी और आर्य विद्वान् विचारक ने दिया हो तो माननीय डॉ. वेदपाल जी उस पर सप्रमाण प्रकाश डालें।

स्त्री पहले बनी अथवा पुरुष?- पश्चिम में भी कुछ विचारकों ने यह प्रश्न उठाया। महर्षि दयानन्द जी का कथन है परमात्मा ने सृष्टि के आदि में अनेक युवा जोड़े (स्त्री-पुरुष) उत्पन्न किये। पं. लेखराम जी ने प्रश्न उठाया कि हमारे सिद्धान्त पर तो यह प्रश्न लागू ही नहीं होता। इसका उत्तर तो आदम व माई हव्वा को मानने वाले ईसाई, मुसलमानों को देना चाहिये। जब सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अनेक जोड़े उत्पन्न किये तो आगे स्त्री से ही सन्तान जन्म लेने लगी। वैदिक नियम ही संसार में चल रहा है, परन्तु ईसाई मुसलमान बतायें कि अब तो सर्वत्र स्त्री की कोख से बच्चे जन्म लेते हैं, पहले आदम से कैसे हव्वा पैदा हो गई?

पं. लेखराम जी के इस तर्क का उत्तर सवा सौ वर्ष से कोई मुल्ला व पादरी नहीं दे सके। मुसलमान तो यह न कहते हैं, न लिखते हैं कि माई हव्वा आदम से उत्पन्न हुई। मान्यता तो उनकी भी नहीं है, परन्तु वे इस विषय में चुप्पी साधने में ही अपना भला मानते हैं।

कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर का दूसरा भाग- कुल्लियात का दूसरा भाग पहले भाग से कहीं बड़ा है। यह अति कठिन कार्य भी पूरा हो गया है। दो प्रूफ़ पढ़े जा चुके हैं। तीसरे प्रूफ़ का कार्य अब कठिन व बोझिल नहीं होगा। उसे दस दिन के भीतर पढ़कर भेज दिया जायेगा। परोपकारिणी सभा के इस संस्करण से पूर्व हिन्दी में जो दो-तीन कुल्लियात छपी, उसमें पूज्य पं. शान्तिप्रकाश जी ने केवल एक पृष्ठ की विषय सूची बनाई। परोपकारिणी सभा के इस संस्करण में श्री महेन्द्रसिंह जी आर्य ने धर्मभाव से स्वयं स्फूर्ति से तीन-चार पृष्ठ की विस्तृत विषय-सूची बनाकर प्रशंसनीय कार्य किया है। इससे पाठकों को, विशेष रूप से गवेषकों व विद्वानों को बड़ा लाभ होगा। सभा की ओर से उनका धन्यवाद।

पं. शान्ति प्रकाश जी ने यत्र-तत्र पठनीय विद्वत्तापूर्ण

टिप्पणियाँ दी ही हैं। हमने देश-विदेश के विद्वानों-ईसाई और क्या मुसलमान लेखकों तथा आर्यसमाज के पूज्य विद्वानों के साहित्य से अनेक उद्धरण दिये हैं।

इसके अतिरिक्त जो स्थल और जो पंक्तियाँ विशेष रूप से पठनीय हैं उन्हें स्थूल अक्षरों (bold type) में करवा दिया है। पुस्तक में पं. लेखराम जी ने तो गिने-चुने ही शीर्षक दिये हैं। हमने यत्र-तत्र अनेक महत्त्वपूर्ण शीर्षक-उपशीर्षक देकर इस कालजयी ग्रन्थ की गरिमा व उपयोगिता बढ़ा दी है।

अब पं. शान्तिप्रकाश जी व इस विनीत की पाद-टिप्पणियाँ तथा हमारे शीर्षक-उपशीर्षक पढ़कर हमारे विचारशील विद्वान् किसी भी स्थान पर वैदिक सिद्धान्तों के मण्डन व अवैदिक मतों के खण्डन में लगातार पन्द्रह दिन तक प्रभावशाली, खोजपूर्ण व रोचक-प्रवचन व्याख्यान दे सकेंगे। हम चाहेंगे कि हमारे प्रतिष्ठित विद्वान् कुल्लियात् के दोनों भाग देखकर अपनी प्रतिक्रिया दें। कुल्लियात में आर्यसमाज के इतिहास, ऋषि जीवन व सब वैदिक मन्तव्यों पर बोलने के लिये सब को नई व ठोस सामग्री मिलेगी।

कुछ लोग गत पचास वर्षों में अपनी कल्पना से आर्यसमाज के इतिहास में मनगढ़न्त सामग्री की मिलावट करके इतिहास प्रदूषण का पाप करते रहे। कुल्लियात के इस संस्करण के छपने से परोपकारिणी सभा के इतिहास की कई महत्त्वपूर्ण (इतिहास को नया मोड़ देने वाली) घटनाओं को हमने मुखरित कर दिया है, यथा महर्षि जी के बलिदान के पश्चात् भारत भर में सबसे पहली ऐतिहासिक शुद्धि काज़ी फ़ाज़िल मौलाना अब्दुल अजीज़ एक्स्ट्रा असिस्टेन्ट कमिश्नर की थी। इनकी शुद्धि का श्रेय पं. लेखराम जी ने परोपकारिणी सभा को दिया है, परन्तु परोपकारिणी सभा के पास मौलाना पण्डित जी की कृपा से पहुँचे। यह पुराने पत्रों में छपा है।

यह मौलाना देश के विश्वविख्यात वैज्ञानिक श्री सतीश धवन के परिवार से थे। श्री बलभद्र जी इन्हीं के कुल से थे। श्री सतीश धवन जी ने हमारे साहित्य में यह प्रसंग पढ़कर ही हमें अपने मान्य दादाजी की जीवनी लिखने की प्रेरणा दी थी। ३३-३४ वर्ष से हम भारतीय इतिहास की यह ऐतिहासिक घटना प्रचारित कर रहे हैं, परन्तु न जाने क्यों लेख पर लेख लिखने वाले महानुभाव आर्यसमाज में इस पर कुछ लिखने से सकुचाते व डरते हैं।

आर्यसमाज की चुप्पी का कारण?- 'तड़प-झड़प' को पढ़कर जो मेधावी सूझबूझ वाला युवक गुरुप्रीत वैदिकधर्मी बनकर ऋषि मिशन से जुड़ा है, वह कुछ दिन पूर्व इस विनीत को मिलने आया। उसने हमें पाकिस्तान में नेट पर पं. लेखराम जी व वैदिक धर्म के विरुद्ध मिर्जाइयों द्वारा किये जा रहे निराधार विषैले प्रचार के प्रमाणस्वरूप अपने मोबाइल में रिकॉर्ड किया गया एक संवाद सुनाया। मैं वह आपत्तिजनक मिथ्या संवाद पूरा न सुन सका। पहले विदेशों से हो रहे ऐसे मिजाई-प्रचार की श्री लक्ष्मण जी 'जिज्ञासु' ने जानकारी दी थी फिर लखनऊ के कुछ आर्य युवकों की प्रेरणा से रक्तसाक्षी पं. लेखराम ग्रन्थ में नेट पर किये जा रहे इस दुष्प्रचार का उल्लेख किये बिना सब आक्षेपों का सप्रमाण मुँहतोड़ उत्तर देकर परोपकारी के द्वारा जानकारी सबको दे दी।

बार-बार कहा जा रहा है कि पं. लेखराम ने गालियाँ दीं, भद्दी भाषा का प्रयोग किया। हमने अपने ग्रन्थ में उन्हें चुनौती दी कि हिन्दुओं के, हमारे पूर्वजों के, वेद के, श्री राम के, श्रीकृष्ण के, माता सीता के, ऋषि दयानन्द के विरुद्ध मिर्ज़ा ने अश्लील भाषा में क्या नहीं लिखा। 'वलदउलज़ना' इतनी गन्दी गाली है कि इसका अर्थ क्या बताया जावे? हिन्दुओं को, मुसलमानों, ईसाइयों को भी मिर्ज़ा ने यह गाली दी। ऐसे बीसियों असंसदीय शब्दों का मिर्ज़ा ने विरोधियों के लिये प्रयोग किया है। पं. लेखराम जी का एक तो असंसदीय शब्द बताया जावे?

सात बार अभियोग चलाकर एक बार भी एक असंसदीय शब्द बताकर मिर्ज़ाई अपनी पालक मालिक अंग्रेज़ सरकार पर दबाव बनाकर पं. लेखराम जी को फँसा न सके। मिर्ज़ा के कुछ मधुर वचन एक विरोधी के बारे में पढ़ लीजिये-

इक सगे दीवाना लुधियाना में है।
आजकल वह ख़र शुतर ख़ाना में है।
आदमियत से नहीं है उसको मस।
है नजासतखोर वोह मसले मगस।।

ये एक लम्बी इलहामी कविता है। भाव इन पंक्तियों का है 'लुधियाना में एक पागल कुत्ता है। आजकल वोह गधों ऊँटों के बाड़े में है। उसका मनुष्यता से कुछ लेना-देना नहीं। वोह विष्ठा गन्दगी खाने वाली मक्खी सदृश है।' हमारे ग्रन्थ में अथवा मुहम्मदियाँ पॉकेट बुक में मिर्ज़ा का गालियों का प्रसाद और...। हिन्दू हमारे सैदे करीब (पकड़ में आने वाला) शिकार हैं। लाला लाजपतराय, वीर अजित सिंह, श्री फ़लक, मेहता नन्दकिशोर आदि प्रख़र देशभक्त क्रान्तिकारी सब 'नमक हराम' हैं। मौन धारे बैठे इन लीडरों का पाप इन्हें ले डूबेगा। मिर्ज़ा ने पण्डित जी को लेखू लिखकर अपनी सभ्यता दिखाई है।

श्री अजय जी से बात कर अपनी एक छोटी-सी पुस्तक (जिसकी मुसलमानों में भी बहुत माँग है) **'नबी का पैग़ाम मौत'** फिर छपवाकर अंग्रेज़ की पैदावार बर्तानवी मसीह को और उसके हिन्दू-द्वेषी-भारत द्वेषी चेलों को नंगा किया जाना आवश्यक है। देश का विभाजन करवाने में ये अग्रणी थे। भारत के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्रसंघ में विष-वमन कथन करने वाला पहला बड़ा पाकिस्तानी ज़फ़रुल्ला मिर्ज़ाई था।

इस लेखक के जीवनकाल में श्री गुरुप्रीत, श्री धर्मेन्द्र जी 'जिज्ञासु' और श्री राजवीर जी जैसे युवक विधर्मियों से लोहा लेने योग्य बन सकते हैं। मुरादाबाद में बैठे श्री अमरनाथ भी एक अनुभवी आर्य हैं। यह सेवक इनको धर्म-रक्षा के लिये तैयार कर सकता है। इनमें धर्म-रक्षा करने के सब गुण हैं। जो प्रशिक्षण वह इस सेवक से लेना चाहें तो ले लें। आर्यो! जागो अब तो धर्म-रक्षा के लिये आपके पास कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर का दूसरा भाग भी एक-डेढ़ मास तक आ जावेगा।

श्री कृष्णचन्द्र जी पंचकूला का प्रश्न- श्री प्रो. कृष्णचन्द्र जी गर्ग एक निष्ठावान् आर्य परिवार के सुयोग्य आर्य मिशनरी हैं। उनके कुल को यह लेखक खूब जानता है। आप कुछ देर अबोहर भी रहे। डॉ. अशोक आर्य तब बालक थे। अशोक जी पर आपने आर्य-धर्म की अच्छी छाप लगाई। आपने सेवक से पूछा है कि हमारे नये ग्रन्थ में स्वामी श्रद्धानन्द जी पर बहुत कुछ है, परन्तु गुरु के बाग़ के मोर्चा का उल्लेख नहीं। उन्हें बताया गया कि प्रकाशन पूर्व इसकी पृष्ठ संख्या साढ़े छः सौ तक रखने की घोषणा की। जब सामग्री छपने के लिये क्रमबद्ध की तो पृष्ठ संख्या आठ सौ से भी ऊपर हो गई। तब कोई २२५ पृष्ठ जो निकाले गये उनमें गुरु के बाग़ की अधिकांश सामग्री भूलवश निकल गई। प्रो. कृष्णचन्द्र जी के कथन में बहुत कुछ सच्चाई है, परन्तु गुरु के बाग़ के मोर्चा के कुछ प्रसंग फिर भी दिये गये हैं। महाराज को अमृतसर में तो विदेशी सरकार ने एक विशेष पिंजरा बनवाकर उसमें बन्द किया। स्वामी जी की ऊँचाई से पिंजरा कम ऊँचा था। उनकी लम्बाई से पिंजरा कम लम्बा था। उसी में उस महान् राष्ट्रीय नेता को शौच करना होता था। वहीं मूत्र करना। वहीं पीने के पानी का घड़ा।

किसी और राष्ट्रीय नेता को भी क्या कभी पिंजरे में रखा गया? यह गुणी पाठक जानते हों तो बता दें। स्वामी जी के इस बन्दी जीवन के कोई १४ वर्ष पश्चात् आर्य नेता क्रान्तिवीर पं. नरेन्द्र जी को जंगल में-एकान्त में बाघ-बघेरों में ऐसे ही एक छोटे पिंजरे में वहाँ के काले पानी में बन्दी बना कर रखा गया।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सब यातनायें हँसते-हँसते बुढ़ापे में सिख पंथ के लिये सहीं। वे स्वर्णमन्दिर में सिखों के लिये हुँकार भरने पर बन्दी बनाये गये। अमृतसर से बाद में मियाँवाली जेल पहुँचाये गये। अगली कहानी और भी दर्दनाक है। उसके कुछ प्रसंग हमारे ग्रन्थ में दिये गये हैं।

एक विशेष प्रसंग आज यहाँ देते हैं। जब मुनि महान् श्रद्धानन्द जी को न्यायाधीश ने दण्ड सुनाया तो कोर्ट खचाखच भरा हुआ था। उस कमरे में तिल धरने को भी स्थान नहीं था। भक्तों की भीड़ चरण-स्पर्श करने को उमड़ पड़ी। ये लोग केवल आर्यसमाजी ही नहीं थे। उनके सिख भक्त व अनेक अन्य हिन्दू भी थे। चरण-स्पर्श करने की बारी नहीं आ रही थी तब पुलिस अधिकारी ने कहा, महाराज आप बाहर पेड़ के नीचे खुले में खड़े हो जायें ताकि सब जन सुविधा से बारी-बारी आपके चरण- स्पर्श कर लें। यहाँ धक्कमपेल हो रही है। यह घटना उस काल के पत्रों से हमें मिल गई। पहले एक बार दीनानगर समाज के पुराने नेता श्री बलदेवराज जी गुप्ता ने हमें सुनाई थी। वह उस दिन

कोर्ट में उपस्थित थे, प्रत्यक्षदर्शी थे।

जब गाँधी बापू दक्षिण के मन्दिरों व वृन्दावन में देवदासियों की कुप्रथा के विरुद्ध कुछ करने वा यातनायें भोग रही-पतित हो रही सहस्त्रों युवा देवियों की रक्षा के लिये कुछ कहने व आन्दोलन छेड़ने से कतरा सकुचा रहे व घबरा रहे थे तब दक्षिण के मूर्धन्य कन्नड़ विचारक व साहित्यकार श्री करन्थ की पुकार पर महान् श्रद्धानन्द ने इस बुराई के उन्मूलन के लिये संघर्ष करने का मन बना लिया। तभी वे बलिदान-पथ के पथिक बन गये। श्री करन्थ की कन्नड़ आत्मकथा से हमने इतिहास की इस लुप्त कड़ी का अनावरण कर दिया है। देखते हैं कि हमारी खोज, हमारे श्रम और हमारी असीम श्रद्धा से आर्यसमाज कुछ लाभ उठाता है। जागृति के लक्षण दिखाई देंगे तो हमें भी हर्ष होगा।

परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस- अत्यन्त ही हर्ष का विषय है कि परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस (२७ फरवरी) को प्रथम बार अजमेर में मनाया जा रहा है। तत्कालीन पत्रों के आधार पर सभा के द्वारा किये गये कार्यों की कुछ प्रामाणिक जानकारी संकेत मात्र यहाँ दी जाती है।

(१) सभा ने ऋषि के बलिदान पर उनका जीवन-चरित्र लिखने की घोषणा की। लोगों से सामग्री भेजने को कहा। लिखना था सभा के मन्त्री को जो पोप निकला। सभा और आर्यसमाज ही छोड़ गया।

(२) सभा के आर्यकरण का आन्दोलन महात्मा मुंशीराम जी ने छेड़ा। यह श्री रामविलास शारदा ने कृतज्ञता से लिखा है।

(३) देश भर में 'भारत की कंगाली' पर पहला व्याख्यान ऋषि जी के पश्चात् श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा ने अजमेर में दिया। यह तत्कालीन पत्रों में छपा है। अपने विषय का यह पहला भाषण सभा ने उस महान् क्रान्तिकारी से करवाया।

(४) उस युग के देश के एक सबसे महान् विद्वान्, मिशनरी, संन्यासी स्वामी नित्यानन्द जी और विश्वेश्वरानन्द जी परोपकारिणी सभा की प्रेरणा से आर्यसमाज से जुड़े। इसके हमारे पास ठोस प्रमाण हैं। लाला लाजपतराय इसके Eye witness (प्रत्यक्षदर्शी) साक्षी ने भी यह लिखा है।

(५) हम बता चुके हैं कि आधुनिक काल में अरबी के प्रकाण्ड विद्वान्, बहुत प्रतिष्ठित राज्य अधिकारी मौलाना अब्दुल अज़ीज पं. लेखराम से प्रभावित होकर घर वापसी के लिये अजमेर सभा के पास ही आये थे। विस्मृति की परतों से यह घटना-यह प्रसंग हमीं ने 'महर्षि दयानन्द सरस्वती सम्पूर्ण जीवन-चरित्र' आदि में पहले दिया। हिन्दुओं में इस शुद्धि से बहुत जान आई। आर्यों का विरोध भी कड़ा हुआ। पं. कृपाराम इस शुद्धि में खुलकर आर्यसमाज के साथ थे तो उनके पिता पं. रामप्रताप जी तब आर्यसमाज के विरोध में खड़े दिखाई दिये।

(६) जब निज़ाम राज्य में हैदराबाद में निज़ाम ने आर्यसमाज से छेडछाड़ आरम्भ की तो पहले स्वामी नित्यानन्द जी पर ही निशाना साधा गया। वे सभा के न्यासी तो नहीं थे, परन्तु सभा की देन थे। सभा से जुड़े थे। पं. लेखराम जी ने उसी समय हैदराबाद राज्य से टक्कर लेने की तैयारी करने की आर्यों को प्रेरणा दी।

(७) सन् १८९६ में मूलराज के मांस-भक्षण अभियान को सबसे बड़ा धक्का परोपकारिणी सभा द्वारा दिया गया, जब केवल जोधपुर समाज को छोड़कर भारत की सब समाजों ने मांस-भक्षण को वेद-विरुद्ध बताया। तब सभा ने सर्वसम्मति से मांस-भक्षण को पाप घोषित किया।

(८) वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, इस मान्यता को भी मूलराज चुनौती दे रहा था। परोपकारिणी सभा ने जब सर्वसम्मत निर्णय इस पर लिया तो मूलराज ने भी इस पर हस्ताक्षर किये। विरोध नहीं किया। यह पूज्य मास्टर आत्माराम जी, रामविलास शारदा ने लिखा है।

(९) जब धौलपुर सत्याग्रह करना पड़ा तो जोधपुर के प्रतापसिंह आदि सब चुप रहे। कोई बोला ही नहीं। ऋषि की मूर्ति स्थापना और समाधि बनाने का पाप ला. साईंदास जी, महात्मा हंसराज और महात्मा मुंशीराम की कृपा से अजमेर में सिरे न चढ़ा।

पं. लेखराम के ग्रन्थ संग्रह

'कुल्लियाते आर्यमुसाफिर' का प्रथम भाग प्रकाशित

दूसरे भाग का प्रकाशन कार्य प्रगति पर

पं. लेखराम आर्यमुसाफिर का ग्रन्थ संग्रह ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' जो कि एक दुर्लभ ग्रन्थ बन चुका था, परोपकारिणी सभा ने उसे पुनः प्रकाशित करने का संकल्प लिया। जिसका सुखद परिणाम यह है कि इस अमूल्य निधि का प्रथम खण्ड महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३५ वें बलिदान दिवस के अवसर पर छपकर तैयार हो चुका है। दूसरा भाग कुछ ही समय उपरान्त सुधी आर्यजनों को उपलब्ध होगा। इस ग्रन्थ के सम्पादन के गुरुतर कार्य में आर्यसमाज के ज्ञानवृद्ध विद्वान् व परोपकारिणी सभा के सम्मानित उपप्रधान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु ने जो महनीय परिश्रम किया है, उससे इस ग्रन्थ की महत्ता में और अधिक वृद्धि हुई है। सभा उनका हृदय से आभार व्यक्त करती है। साथ ही जिन महानुभावों ने इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया, उनका भी सभा धन्यवाद ज्ञापित करती है। सहयोगी जनों के नाम ग्रन्थ में प्रकाशित भी किये गये हैं।

अब जबकि दूसरा भाग छपने के लिये तैयार है, ऐसे में आर्यजन अपने सहयोग से इस ज्ञानयज्ञ को सम्पन्न करेंगे, ऐसी आशा है। - **मन्त्री**

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

प्रिय पाठकगण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अतः ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता, रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल, अग्नि के बीच में उनका होम कर, शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

मनुष्यों को चाहिये कि पुरुषार्थ से विद्या का सम्पादन, विधिपूर्वक अन्न और जल का सेवन, शरीरों को नीरोग और मन को धर्म में निवेश करके सदा सुख की उन्नति करें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.१४**

वैदिक कर्मफल व्यवस्था

कृष्ण चन्द्र गर्ग

सुख-दु:ख का कारण मनुष्य के कर्म (काम या कार्य) हैं, ग्रह नहीं। मनुष्य जैसा काम करता है वैसा ही फल पाता है। ऐसा काम जिससे किसी का भला हुआ हो उसके बदले में ईश्वर की व्यवस्था से सुख प्राप्त होता है और ऐसा काम जिससे किसी का बुरा हुआ हो उसके बदले में मनुष्य को दु:ख मिलता है। ईश्वर पूर्ण रूप से न्यायकारी है। वह किसी की सिफारिश नहीं मानता। वह रिश्वत नहीं लेता। उसका कोई एजेंट या पीर, पैगम्बर या अवतार नहीं है।

अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कामों का फल अलग-अलग भोगना पड़ता है। वे एक-दूसरे को काटकर बराबर नहीं करते। अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कामों का अलग-अलग हिसाब रहता है। ऐसा नहीं है कि एक अच्छा काम कर दिया और एक उतना ही बुरा काम कर दिया और वे बराबर होकर कट गए और हमें कोई फल न मिले। दोनों का अलग-अलग फल भोगना पड़ता है। अच्छे और बुरे कामों के फलस्वरूप सुख और दु:ख साथ-साथ भी चल सकते हैं। कुछ अच्छे कामों का फल हम भोग रहे हैं, साथ ही कुछ बुरे कार्यों का फल भी भोग रहे हैं।

मनुष्य जन्म में किए कामों के अनुसार ही आगे का जन्म मिलता है। अगर बुरे काम की बजाय अच्छे काम ज्यादा हों तो अगला जन्म मनुष्य का ही मिलता है। अगर बुरे काम ज्यादा हों तो अगला जन्म कर्मों के अनुसार पशु, पक्षी, कीड़ा, मकोड़ा आदि कुछ भी हो सकता है। यह बात सही नहीं है कि चौरासी लाख योनियों में से होकर ही मनुष्य जन्म फिर से मिलता है। हमारे सामने ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जहाँ बच्चों को अपने पूर्व के जन्म का ज्ञान है और वे पूर्व जन्म में भी मनुष्य योनि में ही थे।

भाग्य या प्रारब्ध क्या है। मनुष्य जो भी अच्छा या बुरा काम करता है उसके बदले में उसके अनुसार उसे जो फल मिलता है वही उसका भाग्य है। इस प्रकार अपना भाग्य मनुष्य खुद बनाता है, कोई और नहीं। कोई भी किसी दूसरे का भाग्य न बना सकता है और न ही बिगाड़ सकता है। किसान ने खेती करके जो फसल घर में लाकर रख ली वह उसका भाग्य है, उसकी अपनी मेहनत का फल।

किसी भी अच्छे या बुरे काम का फल शासन-प्रशासन भी दे सकता है। अगर शासन-प्रशासन न दे तो ईश्वर तो देता ही है। कोई भी कर्म बिना फल के नहीं रहता।

जैसे माता-पिता अपनी सन्तानों को बुरे कार्यों से हटाकर अच्छे कामों में लगाने की कोशिश करते हैं वैसे ही ईश्वर भी करता है। जब मनुष्य कोई बुरा काम करने लगता है तब उसे अन्दर से भय, शंका, लज्जा महसूस होती है और जब वह कोई अच्छा काम करने लगता है उसे आनन्द, उत्साह, अभय, नि:शंका अनुभव होती है। ये दोनों प्रकार की भावनाएँ ईश्वर की प्रेरणा होती हैं।

मनुष्य कुकर्म क्यों करता है? अविद्या अर्थात् मान लेना कि कुकर्म के फल से बचने का उपाय कर लेंगे तथा राग, द्वेष और लालच के कारण ही मनुष्य कुकर्म कर बैठता है।

अथर्ववेद (१२-३-४८) – कर्म का फल करने वाले को ही मिलता है। इसमें किसी और का सहारा नहीं होता, न मित्रों का साथ मिलता है। कर्मफल-प्राप्ति में कमी या अधिकता नहीं होती। जिसने जैसा कर्म किया उसको वैसा ही और उतना ही फल मिलता है।

महाभारत में युद्ध की समाप्ति पर गान्धारी श्री कृष्ण से कहती है – निश्चय ही पूर्व जन्म में मैंने पाप कर्म किए हैं जो मैं अपने पुत्रों, पौत्रों और भाइयों को मरता हुआ देख रही हूँ।

महाभारत में ही शान्ति पर्व में कहा गया है – जैसे बछड़ा हजारों गउओं के बीच में अपनी माँ के पास ही जाता है ऐसे ही कर्म-फल कर्म के करने वाले के पास ही जाता है।

मनुस्मृति (४-२४०) – जीव अकेला ही जन्म और

मरण को प्राप्त होता है। अकेला ही अच्छे कर्मों का फल सुख और बुरे कामों की फल दु:ख के रूप में भोगता है।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण (प्रकृति ३७–१६) – करोड़ों कल्प बीत जाने पर भी बिना कर्म फल को भोगे उनसे छुटकारा नहीं मिल सकता।

चाणक्य नीति – किए हुए अच्छे और बुरे कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

गीता (५–१५) – हमारे सुखों और दु:खों के लिए परमात्मा उत्तरदायी नहीं है, बल्कि हमारे अच्छे और बुरे कर्म उत्तरदायी हैं। अज्ञानता के कारण हम अपने सुख दु:ख के लिए परमात्मा को उत्तरदायी ठहराते हैं, जबकि वह न हमारे पापों के लिए जिम्मेदार है और न ही पुण्यों के लिए जिम्मेदार है।

वाल्मीकि रामायण (युद्ध काण्ड ६३–२२) – रावण के मारे जाने के बाद जब हनुमान लंका में सीता को राम की विजय का समाचार सुनाने गए तब सीता ने हनुमान से कहा – मैंने यह सब दु:ख पूर्व जन्म में किए हुए कर्मों के कारण ही पाया है क्योंकि अपना किया हुआ ही भोगा जाता है।

वाल्मीकि रामायण (अरण्य काण्ड ३५–१७, १८, १९, २०) – सीताहरण के पश्चात श्री राम सीता के वियोग में विलाप करते हुए कहते हैं – हे लक्ष्मण! मैं समझता हूँ, इस सारी भूमि पर मेरे समान बुरे काम करने वाला पापी पुरुष और कोई नहीं है क्योंकि एक के पश्चात एक दु:खों की परम्परा मेरे हृदय और मन को चीर रही है। पूर्व जन्म में निश्चय ही मैंने एक के पश्चात एक बहुत से पाप किए हैं। उन्हीं पापों का फल आज मुझे मिल रहा है। राज्य हाथ से छिन गया, अपने लोगों से वियोग हो गया, पिता जी परलोक सिधार गए, माता जी से बिछोह हो गया। इन घटनाओं को याद करके मेरा हृदय शोक से भर जाता है। हे लक्ष्मण! ये सारे दु:ख इस रमणीक वन में आने पर शान्त हो गए थे। परन्तु आज सीता के वियोग से वे सभी भूले हुए दु:ख उसी प्रकार फिर से ताजा हो गए हैं जैसे लकड़ी डालने से आग जल उठती है।

पश्चात्ताप (मनुस्मृति ११–२३०) – पाप-कर्म होने पर उस पर पश्चात्ताप करके मनुष्य उस पाप भावना से छूट जाता है। फिर वह पाप-कर्म नहीं करता। यही पश्चात्ताप का फल है। जो कर चुका उसका फल तो भोगना ही पड़ेगा। किए कर्म के फल से बचने का शास्त्रों में कहीं कोई उपाय नहीं बताया। पाप का फल अवश्य मिलेगा यह सोचकर मनुष्य को पाप-कर्म नहीं करना चाहिए।

कुकर्म से बचने के उपाय – अपने आप को ईश्वर के साथ जोड़ने से मनुष्य पाप-कर्म से बच सकता है। यह जानकर कि ईश्वर हर समय मेरे साथ है, मेरे सभी कामों को देखता है तथा उसके अनुसार मुझे फल भी देता है मनुष्य दुष्कर्म से बच सकता है।

महाभारत – धर्म का सर्वस्व जानना चाहते हो तो सुनो। दूसरों का जो व्यवहार आपको अपने प्रतिकूल (विरुद्ध) लगता है अर्थात् दूसरों का जो व्यवहार आपको पसन्द नहीं वैसा व्यवहार आप दूसरों के साथ मत करो।

जैसे अग्निगन अपने पास आई लकड़ी को जला देती है ऐसे ही वेद का ज्ञान मनुष्य में पाप की भावना को जला देता है अर्थात् वेद के स्वाध्याय से मनुष्य में पापकर्म करने की भावना समाप्त हो जाती है।

यजुर्वेद (४०. ३) – जो मनुष्य अपनी आत्मा का हनन करते हैं अर्थात मन में और जानते हैं, वाणी से और बोलते हैं और करते कुछ और हैं, वे ही मनुष्य असुर (दैत्य, राक्षस, पिशाच आदि) हैं। वे कभी भी आनन्द को प्राप्त नहीं करते। जो आत्मा, मन, वाणी और कर्म से कपटरहित एक सा आचरण करते हैं वे ही देवता हैं, वे इस लोक और परलोक में सुख भोगते हैं।

सत्यमेव जयते नानृतं, सत्येन पन्था विततो देवयानः।

– सत्य की ही जीत होती है, झूठ की नहीं। सत्य पर चलकर ही मनुष्य देवता बनता है। ऋषि लोग सत्य पर चलकर ही परमात्मा को पाकर आनन्द प्राप्त करते हैं।

ईश्वर की न्याय-व्यवस्था में जो किसी का जितना भला करेगा उसको उतना ही सुख मिलेगा और जितना किसी का बुरा करेगा उतना ही उसे दु:ख मिलेगा। इस प्रकार सत्य और पक्षपातरहित न्याय का आचरण तथा परोपकार के कार्य ही सुख रूप फल देने वाले हैं।

८३१ सैक्टर १०, पंचकूला, हरियाणा

संसार में शान्ति प्राप्त करने का एक मात्र उपाय

वैदिक धर्म

पं. उम्मेद सिंह विशारद

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा रचित **संस्कार विधि** जो युग-निर्माण में महत्त्वपूर्ण है, उसके गृहाश्रम प्रकरण में वैदिक धर्म के विषय में महर्षि लिखते हैं कि-

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्।
धर्मं त्ययेत्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये,
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः।।

महाभारत

अर्थात् मनुष्यों को योग्य है कि काम से, अर्थात् झूठ से कामना सिद्ध होने के कारण से वा निन्दा-स्तुति आदि के भय से भी धर्म का त्याग कभी न करे और न लोभ से। चाहे झूठ व अधर्म से चक्रवर्ती राज्य भी मिलता हो तथापि धर्म को छोड़कर चक्रवर्ती राज्य को भी ग्रहण न करें। चाहे भोजन, छादन, जल-पान आदि जीविका भी अधर्म से ही हो सके वा प्राण जाते हों, परन्तु जीविका के लिये धर्म को कभी न छोड़े। क्योंकि जीव व धर्म तो नित्य है तथा सुख दुःख दोनों अनित्य हैं, अनित्य के लिये नित्य को छोड़ना अतीव दुष्ट कर्म है इस धर्म के हेतु कि जिस शरीर आदि से धर्म होता है वह भी अनित्य है। धन्य वे मनुष्य हैं जो अनित्य शरीर और सुख दुःखादि के व्यवहार से वर्तमान होकर नित्य धर्म का त्याग कभी नहीं करते।

संस्कार विधि

धर्म एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीतः।।

महाभारत

अर्थात् जो पुरुष धर्म का नाश करता है, उसका नाश धर्म कर देता है और जो धर्म की रक्षा करता है, उसकी धर्म भी रक्षा करता है इसलिए मारा हुआ धर्म कभी हमें भी न मार डाले, इस भय से धर्म का हनन अर्थात् त्याग कभी न करना चाहिए।

यत्र धर्मो ह्यधर्मेण सत्यं यत्रानृतेन च।
हन्यते प्रेक्षमाणास्तु हतास्तत्र सभासदः।।

मनु

अर्थात् जिस सभा में बैठे हुए सभासदों के सामने अधर्म से धर्म और झूठ से सत्य का हनन होता है, उस सभा के सब सभासद मरे से ही हैं।

महर्षि दयानन्द जी संस्कार विधि में ग्रहाश्रम प्रकरण में लिखते हैं।

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः,
वृद्धाः न ते ये न वदन्ति धर्मम्।
नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति,
न तत् सत्यं यच्छलेनाभ्युपेतम्।।

महाभारत

वह सभा नहीं होती, जहाँ वृद्ध ना हों। जो सभा में धर्म की बात ना करे वो वृद्ध नहीं होते। जहाँ सत्य ना हो वह धर्म नहीं हो सकता और जिस सत्य में छल हो, वह सत्य, सत्य नहीं होता।

स्वाध्यायेन व्रतै होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।।

अर्थात् मनुष्य को चाहिए कि धर्म से वेदादि शास्त्रों का पठन-पाठन, गायत्री-प्रणवादि का अर्थ विचार, ध्यान, अग्निहोत्रादि होम, कर्मोपासना ज्ञान-विद्या, पौर्णमास्यादि-इष्टि, पञ्चमहायज्ञ, अग्निष्टोम आदि, न्याय से राज्यपालन, सत्योपदेश और योगाभ्यासादि उत्तम कर्मों से इस शरीर को अर्थात् ब्रह्मसम्बन्धी करें। सत्यार्थप्रकाश से मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्वसामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे व महाअनाथ निर्बल और गुण रहित क्यों न हों रक्षा, उन्नति और प्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ

तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें। इस काम में चाहे प्राण भी भले चले जायें, परन्तु मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक कभी न हों।

मानव के नव-निर्माण का आधार वैदिक सोलह संस्कार हैं।

संस्कार का अर्थ है किसी वस्तु के रूप को बदल देना। वैदिक संस्कृति में मानव जीवन-निर्माण के लिये सोलह संस्कारों का विधान है। इसका अर्थ है कि जन्म से सोलह बार मानव को बदलने की प्रक्रिया है। जैसे लोहार लोहे को अग्नि में डालकर अपने अनुसार वस्तु का संस्कार कर देता है। उसी प्रकार बालक के उत्पन्न होने से पहले और बाद में संस्कारों की भट्टी में डालकर उसके दुर्गुण निकालकर सद्गुण बनाने की प्रक्रिया है।

चरक ऋषि ने कहा है-

संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते

अर्थात् संस्कार से पूर्व जन्म के दुर्गणों को हटाकर सद्गुणों का आधान कर देने का विधान है। बालक का जन्म होता है तो वह दो संस्कारों को लेकर चलता है, एक जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार, दूसरा माता-पिता के संस्कार। वैदिक संस्कार व संस्कृति की योजना से ही मानव का नव आदर्श संस्कारिक निर्माण होता है।

यह आवश्यक है - उपेक्षणीय नहीं

श्रद्धेय पाठकगण- आज समाज जगत् में हो रहे कुसंस्कारों और अत्यधिक पाश्चात्य सभ्यता के वातावरण को देखकर चिन्तित है, आज परिवार टूट रहे हैं, स्वार्थ और अत्यधिक सुख पाने की लालसा में माता-पिता व अन्य बुजुर्गों की अवहेलना हो रही है। कितना सुन्दर और सांस्कारिक भारतीयों का अतीत था, सभी भारतवासी सुख उठाते रहे और भारत धरती का स्वर्गधाम बना रहा, परन्तु आज से छः हजार वर्ष व्यतीत हुए कि भारतीयों के परिवार वैदिक शिक्षा को छोड़कर अवैदिक शिक्षा पर चलकर निरन्तर धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक उच्च आदर्शों को छोड़ते जा रहे हैं।

युग निर्माण के लिये आवश्यक प्रयत्न करना इसलिये उचित है कि जिस दुनिया में हम रहते हैं, यदि वह कुसंस्कारी व दूषित रही तो अपने लिये सदा संकट और चिन्ता की स्थिति बनी रहेगी। यदि चारों ओर विवेकहीन व दुष्टतापूर्वक वातावरण बना हुआ हो तो अपने सत्य आदर्श व यत्न निरर्थक चले जाते हैं। वातावरण में फैली बुराइयाँ और विचारधारा, हवा और सर्दी-गर्मी की तरह अपने ऊपर आक्रमण करती है। इसलिये आवश्यक है कि बुराइयों से सदैव संघर्ष करना चाहिए। समाज में कुरीतियाँ फैली हों और हम चुप बैठे रहें तो यह अविवेकपूर्ण होगा। चोर, डाकू-दुष्ट, दुराचारी, शरारती और अन्धविश्वासी लोगों के बीच रहकर कोई भी व्यक्ति अपनी सज्जनता व आदर्शों की रक्षा नहीं कर सकता है। किन्तु श्रेष्ठ मनुष्यों का उत्तरदायित्व है कि वेदानुकूल संस्कार व संस्कृति के प्रचार-प्रसार और उसको अक्षुण्ण रखने के लिये सदैव तत्पर रहे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी कहते हैं कि हे मनुष्यो! तुम ईश्वर द्वारा प्रदत्त, अग्नि, वायु, जल, वनस्पति व अन्य दिव्य साधनों के बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते हो तो ईश्वर द्वारा प्रदत्त वैदिक धर्म पर क्यों नहीं चलते हो यही तुम्हारी अशान्ति व दुःखों का कारण है।

मनुष्य-जन्म सत्यासत्य निर्णय हेतु

मनुष्य का जन्म सत्यासत्य का निर्णय करने-कराने के लिए है न कि वादविवाद, विरोध करने-कराने के लिए। इसी मतमतान्तर के विवाद से जगत् में जो-जो अनिष्ट फल हुए, होते हैं और होंगे, उनको पक्षपातरहित विद्वज्जन जान सकते हैं। जब तक इस मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मतमतान्तर का विरुद्ध वाद न छूटेगा तब तक अन्योन्य को आनन्द न होगा। यदि हम सब मनुष्य और विशेष विद्वज्जन ईर्ष्या-द्वेष, छोड़, सत्यासत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना कराना चाहें तो हमारे लिए यह बात असाध्य नहीं है।

(स. प्र. म. ११ वाँ समु.)

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)-प्रथम खण्ड

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ४५०/- **पृष्ठ**- ४०८

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अवैदिक मान्यताओं के खण्डन एवं वैदिक विचारधारा की प्रतिष्ठा के लिये लेखन और उपदेश दोनों ही विधाओं का भरपूर उपयोग किया। उनके बलिदान के पश्चात् उनके जिन शिष्यों ने इस कार्य को गति दी, उनमें पण्डित लेखराम का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पण्डित जी की उपस्थिति का आभास मात्र ही विरोधियों के अन्तस् को कँपाने के लिये पर्याप्त होता था। उस मनीषी के मौखिक उपदेश तो संग्रहित नहीं हो पाये, परन्तु उनकी धारदार लेखनी से निकले वाक्य हमारे पास आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' के नाम से जाना जाता है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका यह प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया है। दूसरा प्रकाशनाधीन है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जो कि कई भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्होंने इसका कुशल सम्पादन किया है।

२. अष्टाध्यायी भाष्य- भाग २

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रुपये **पृष्ठ**- ४१४

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्तों, कर्मकाण्ड, वेदभाष्य आदि के साथ-साथ संस्कृत व्याकरण पर भी पर्याप्त साहित्य का निर्माण किया है। १४ खण्डों में प्रकाशित वेदांग-प्रकाश के साथ-साथ अष्टाध्यायी ग्रन्थ के चार अध्यायों तक का भाष्य भी किया। यह भाष्य तीन खण्डों में परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया गया, परन्तु इसका द्वितीय भाग समाप्त होने से यह अपूर्ण हो गया था। अब इसका दूसरा भाग भी छप चुका है, जिससे यह सम्पूर्ण रूप में व्याकरण के अध्येताओं को सुलभ हो गया है।

३. संस्कृत वाक्य प्रबोध

लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- ५०रुपये **पृष्ठ**- ११६

स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने यह 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में दैनिकचर्या में प्राय: प्रयोग होने वाले वाक्यों का संकलन है। ये वाक्य ५२ अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित हैं, यथा-गुरुशिष्य वार्तालाप प्रकरण, गृहाश्रम प्रकरण, नामनिवास-स्थान प्रकरण आदि। घर में बच्चों को संस्कृत सम्भाषण का ज्ञान कराने के लिये यह पुस्तक महर्षि द्वारा प्रदत्त उपहार है। छपाई एवं आवरण सौन्दर्य की दृष्टि से भी पुस्तक अत्यन्त आकर्षक है।

४. शङ्का-समाधान

लेखक- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा)

मूल्य- ७०/- रुपये **पृष्ठ**- १४०

परोपकारी पत्रिका कई वर्षों से निरन्तर शङ्का-समाधान की परम्परा चलाये हुए है, जिसके कि आर्यजगत् में बहुत ही सार्थक परिणाम हुए हैं। धर्म, दर्शन, सिद्धान्त, व्याकरण आदि विषयों पर आये प्रश्नों के सभी समाधान परोपकारी के अलग-अलग अंकों में होने कारण पाठकों को एक साथ उपलब्ध नहीं हो पाते थे। इन सबकी उपयोगिता एवं पाठकों की माँग को देखते हुए इन सबको पुस्तक का रूप दिया गया है। समाधानकर्ता डॉ. वेदपाल आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं, उनके शास्त्रीय ज्ञान से भरी यह पुस्तक सभा की ओर से स्वाध्यायशील आर्यों को सादर समर्पित है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

वेद क्या है?

स्वामी वेदानन्द सरस्वती

वेद भारतीय आचार-विचारों एवं ज्ञान का मूल स्रोत है, अतः उसके विषय में जानने की इच्छा स्वाभाविक रहती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थों में वेद के सम्बन्ध में उठने वाले प्रश्नों का तार्किक समाधान दिया है, परन्तु यह सब अलग-अलग ग्रन्थों में अलग-अलग स्थानों पर होने के कारण नये जिज्ञासु के लिये सहज सुलभ नहीं था। स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी ने वेद से सम्बन्धित सभी जानकारी महर्षि के ग्रन्थों से संकलित कर विषयवार प्रस्तुत कर दी है जिससे जिज्ञासुजन इसे एक ही स्थान पर पढ़ पायेंगे। यह लेख प्रथम बार आर्योदय पत्रिका के वेदांक में छपा था, इसकी महत्ता को देखते हुए इसे पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। -सम्पादक

''जो-जो ग्रन्थ सृष्टि के आदि से लेके आज तक पक्षपात और राग-द्वेषरहित, सत्य-धर्मयुक्त सब लोगों के प्रिय प्राचीन विद्वान् आर्य्य लोगों ने (स्वतः प्रमाण) अर्थात् अपने आप ही प्रमाण, (और) परतः प्रमाण, अर्थात् वेद और प्रत्यक्षानुमानादि से प्रमाण भूत हैं...उनको आगे कहते हैं।''

''...ईश्वर की कही हुई जो चारों मन्त्र संहिता हैं, वे ही स्वयं प्रमाण होने योग्य हैं अन्य नहीं, परन्तु उससे भिन्न भी जो-जो जीवों के रचे हुए ग्रन्थ हैं वे भी वेदों के अनुकूल होने से परतः प्रमाण के योग्य हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

वेद निर्भ्रम और स्वतः प्रमाण क्यों है? - ''क्योंकि वेद ईश्वर के रचे हुए हैं और ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वविद्यायुक्त तथा सर्वशक्ति वाला है, इस कारण से उसका कथन ही निर्भ्रम और प्रमाण के योग्य है और जीवों के बनाये ग्रन्थ स्वतः प्रमाण के योग्य नहीं होते, क्योंकि वे (जीव) सर्वविद्यायुक्त और सर्वशक्तिमान नहीं होते। इसलिए उनका कहना स्वतः प्रमाण के योग्य नहीं हो सकता। ऊपर के कथन से यह बात सिद्ध होती है कि वेद विषय में जहाँ कहीं प्रमाण की आवश्यकता हो वहाँ सूर्य्य और दीपक अपने ही प्रकाश से प्रकाशमान होके सब क्रिया वाले द्रव्यों को प्रकाशित कर देते हैं, वैसे ही वेद भी अपने प्रकाश से प्रकाशित होके अन्य ग्रन्थों को भी प्रकाशित करते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि जो-जो ग्रन्थ वेदों से विरुद्ध हैं वे कभी प्रमाण वा स्वीकार करने के योग्य नहीं होते और वेदों का (यदि) अन्य ग्रन्थों के साथ विरोध भी हो, तब भी अप्रमाण के योग्य नहीं ठहर सकते, क्योंकि वे तो अपने ही प्रमाण से प्रमाण-युक्त हैं। इसी प्रकार ऐतरेय, शतपथ ब्राह्मणादि ग्रन्थ जो वेदों के अर्थ और इतिहासादि से युक्त बनाये गये हैं, वे भी परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल ही होने से प्रमाण कहे जाते हैं और उनके भिन्न ऐतरेय, शतपथ आदि प्राचीन सत्य ग्रन्थ हैं, ये परतः प्रमाण के योग्य हैं।''**-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**

(२) ''मैं उपनिषदों में एक 'ईशावास्य' को छोड़ के अन्य उपनिषदों को वेद नहीं मानता, किन्तु अन्य सब उपनिषद ब्राह्मण ग्रन्थों में हैं, वे ईश्वरोक्त नहीं हैं।''

-भ्रमोच्छेदन

(३) ''मैं ब्राह्मण पुस्तकों को भी वेद नहीं मानता'' क्योंकि जो ईश्वरोक्त है, वही वेद होता है। जीवोक्त को वेद नहीं कहते। जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं, वे सब ऋषि मुनि-प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत हैं। जैसा ईश्वर के सर्वज्ञ होने से तदुक्त निर्भ्रान्त सत्य और मत के साथ स्वीकार करने योग्य होता है, जीवोक्त नहीं हो सकता क्योंकि वे (अर्थात्-जीव) सर्वज्ञ नहीं, परन्तु जो वेदानुकूल ब्राह्मण ग्रन्थ हैं, उनको मैं मानता और विरुद्धार्थों को नहीं मानता हूँ। वेद स्वतः प्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं, इससे जैसे वेद-विरुद्ध ब्राह्मण ग्रन्थों का त्याग होता है, वैसे ब्राह्मण-ग्रन्थों से विरुद्धार्थ होने पर भी वेदों का परित्याग कभी नहीं हो सकता, क्योंकि वेद सर्वथा सब को माननीय है।'' **-भ्रमोच्छेदन**

वेद किन का नाम है? - ''जो ईश्वरोक्त सत्य विद्याओं से युक्त ऋक् संहितादि चार पुस्तक हैं, जिनसे मनुष्यों को सत्यासत्य का ज्ञान होता है, उनको वेद कहते हैं।'' **-आर्य्योद्देश्य रत्नमाला**

सृष्टि के आदि में वेदों का ज्ञान किन्हें और कैसे

दिया गया? - ''अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा, इन चारों मनुष्यों को, जैसे वादित्र को कोई बजावे वा काठ की पुतली को चेष्टा करावे, इसी प्रकार ईश्वर ने उनको निमित्त मात्र किया था।'' **-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**

वेदों का ''श्रुति'' नाम क्यों है? - ''सृष्टि के आरम्भ से आज पर्यन्त और ब्रह्मादि से लेके हम लोग पर्यन्त जिससे सब सत्य विद्याओं को सुनते आते हैं, इससे वेदों का 'श्रुति' नाम पड़ा है, क्योंकि किसी देहधारी ने वेदों के बनाने वाले को साक्षात् कभी नहीं देखा। इस कारण से जाना गया कि 'वेद' निराकार ईश्वर से ही उत्पन्न हुए और उनको सुनते-सुनाते ही आज पर्यन्त सब लोग चले आते हैं।'' **-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**

वेद कब पुस्तक रूप में आये? - पाठकगण! वेदों का नाम 'श्रुति' भी है, कारण यह कि आदि सृष्टि से लेकर अनेक वर्षों पर्यन्त लोग 'श्रवण' द्वारा ही इस ज्ञान को ग्रहण करते रहे और उन लोगों की स्मृति इतनी तीव्र होती थी कि सम्पूर्ण ज्ञान उन्हें सहज में याद हो जाता था, परन्तु एक समय ऐसा आया कि उनकी स्मृति धीरे-धीरे निर्बल होती गई और वेदों के ज्ञान को संभालकर सुरक्षित न रख सके। तब ऋषियों ने वेदों को पुस्तक-रूप में परिणत कर दिया। महर्षि दयानन्द ने ता. २५ जुलाई सन् १८७१ ई. में पूना में 'इतिहास' विषय पर एक व्याख्यान दिया। उस व्याख्यान में महर्षि ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये-

''इस प्रकार के मनुष्यों में गुण-कर्मानुरूप व्यवस्था स्वायम्भुव मनु के समय तक पूर्णतया चलती रही। मनु के दस पुत्र थे। स्वायम्भुव मनु का बेटा मारीच प्रथम क्षत्रिय राजा हुआ, इसके पश्चात् हिमालय के प्रदेश में छः क्षत्रिय राजाओं की परम्परा हुई, अनन्तर इक्ष्वाकु राजा राज्य करने लगा... इक्ष्वाकु, आर्यावर्त का प्रथम राजा हुआ। इक्ष्वाकु की ब्रह्मा से छठी पीढ़ी है। पीढ़ी शब्द का अर्थ ''बाप से बेटा'' यही न समझें, किन्तु एक अधिकारी से दूसरा अधिकारी, ऐसा अर्थ जानें। पहिला अधिकारी स्वयम्भुव था। इक्ष्वाकु के समय में लोग अक्षर स्याही आदि लिखने की रीति को प्रचार में लाये, ऐसा प्रतीत होता है, क्योंकि इक्ष्वाकु के समय में वेद को बिल्कुल कण्ठस्थ करने की रीति कुछ-कुछ बन्द होने लगी (थी), जिस लिपि में वेद लिखे जाते थे, उसका नाम 'देवनागरी' ऐसा है। कारण (यह कि) देव अर्थात् विद्वान् (इनका जो नगर, ऐसे विद्वान्) नागर लोगों ने अक्षर द्वारा अर्थ संकेत उत्पन्न करके ग्रन्थ लिखने का प्रचार प्रथम प्रारम्भ किया।''

-पूना का व्याख्यान

वेदों का ज्ञान नित्य है - (१) ''जैसे इस कल्प की सृष्टि में शब्द, अक्षर, अर्थ और सम्बन्ध वेदों में हैं, इस प्रकार से पूर्व कल्प में थे और आगे भी होंगे, क्योंकि ईश्वर की जो विद्या है, सो नित्य एक ही रस बनी रहती है, उनके एक अक्षर का भी विपरीत भाव कभी नहीं होता। सो ऋग्वेद से लेके चारों वेदों की संहिता अब जिस प्रकार की हैं कि इनमें शब्द, अर्थ, सम्बन्ध, पद और अक्षरों का जिस क्रम से वर्त्तमान है, इसी प्रकार का क्रम सब दिन बना रहता है, क्योंकि ईश्वर का ज्ञान नित्य है, उसकी वृद्धि, क्षय और विपरीतता कभी नहीं होती, इस कारण से वेदों को नित्य स्वरूप ही मानना चाहिए।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

(२) ''जब-जब परमेश्वर सृष्टि को रचता है, तब-तब प्रजा के हित के लिए सृष्टि की आदि में सब विद्याओं से युक्त वेदों का भी उपदेश करता है और जब-जब सृष्टि का प्रलय होता है, तब-तब वेद उसके ज्ञान में सदा बने रहते हैं, इससे उनको सदैव नित्य मानना चाहिए।''

(३) ''जो ईश्वर नित्य और सर्वज्ञ है उसके लिए वेद भी नित्य और सर्वज्ञ होने के योग्य है।''

क्या वेदों में इतिहास है? - ''ब्राह्मण पुस्तकों में बहुत से ऋषि, महर्षि और राजादि के इतिहास लिखे हैं और इतिहास जिसका हो, उसके जन्म के पश्चात् लिखा जाता है। वह ग्रन्थ भी उसके जन्म के पश्चात् होता है। वेदों में किसी का इतिहास नहीं किन्तु विशेष जिस-जिस शब्द से विद्या का बोध होवे, उस-उस शब्द का प्रयोग किया है, किसी मनुष्य संज्ञा वा विशेष कथा का प्रसंग वेदों में नहीं।'' **-सत्यार्थप्रकाश समु. ७**

प्रत्येक मन्त्र के साथ 'ऋषि' किसलिये लिखा होता है? - ''ईश्वर जिस समय आदि सृष्टि में वेदों का प्रकाश कर चुका, तभी से प्राचीन ऋषि लोग वेद-मन्त्रों के अर्थों का प्रचार करने लगे, फिर उनमें से जिस-जिस मन्त्र

का अर्थ जिस-जिस ऋषि ने प्रकाशित किया, उस-उस का नाम उसी-उसी मन्त्र के साथ स्मरण के लिए लिखा गया है, इसी कारण से उनका ऋषि नाम भी हुआ है और उन्होंने ईश्वर के ध्यान और अनुग्रह से बड़े-बड़े प्रयत्न के साथ वेद मन्त्रों के अर्थों को यथावत् जानकर सब मनुष्यों के लिए पूर्ण उपकार किया है, इसलिए विद्वान् लोग वेद-मन्त्रों के साथ उनका स्मरण रखते हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

''जिस-जिस मन्त्रार्थ का दर्शन जिस ऋषि को हुआ और प्रथम ही, जिसके पहिले उस मन्त्र का अर्थ किसी ने प्रकाशित नहीं किया था, किया और दूसरों को पढ़ाया भी, इसलिए अद्यावधि उस-उस मन्त्र के साथ ऋषि के नाम स्मरणार्थ लिखा आता है, जो कोई ऋषियों को मन्त्र-कर्ता बतलावे, उनको मिथ्यावादी समझें, वे तो मन्त्रों के अर्थ-प्रकाशक हैं।'' **-सत्यार्थप्रकाश समु. ७**

ऋषि लोगों को वेदों के अर्थ किसने और कैसे बताए? - ''परमेश्वर ने जनाया और धर्मात्मा योगी महर्षि लोग जब-जब जिस-जिस के अर्थ जानने की इच्छा करके ध्यानावस्थित हो (कर) परमेश्वर के स्वरूप में समाधि-स्थित हुए, तब-तब परमात्मा ने अभीष्ट मन्त्रों के अर्थ जताये। जब बहुतों के आत्माओं में वेदार्थ प्रकाश हुआ, तब ऋषि-मुनियों ने इतिहासपूर्वक ग्रन्थ बनाये, उनका नाम ''ब्राह्मण'' अर्थात् ब्रह्म जो वेद (है) उसका व्याख्यान ग्रन्थ होने से ब्राह्मण नाम हुआ।'' **-स. प्र. स. ७**

ऋषियों ने वेद-मन्त्रों का प्रकाश क्यों किया? - ''वेद प्रचार की परम्परा स्थिर रहने के लिए तथा जो लोग वेद-शास्त्रादि पढ़ने को कम समर्थ हैं वे जिससे सुगमता से वेदार्थ जान लेवें, इसलिए निघण्टु और निरुक्त आदि ग्रन्थ भी बना दिये हैं कि जिनके सहाय से सब मनुष्य वेद और वेदाङ्गों को ज्ञानपूर्वक पढ़कर उनके सत्य अर्थों का प्रकाश करें।'' **-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका**

मन्त्रों का 'देवता' क्या होता है? - ''जिन-जिन मन्त्रों में जिन-जिन पदार्थों की प्रधानता से स्तुति की है, मन्त्रों के देवता जानने चाहिए अर्थात् जिस-जिस मन्त्र का जो अर्थ होता है, वही उसका 'देवता' कहा है, सो यह इसलिए है कि जिससे मन्त्रों को देख के उनके अभिप्रायार्थ का यथार्थ ज्ञान हो जाय, इत्यादि प्रयोजन के लिए देवता शब्द मन्त्र के साथ में लिखा जाता है।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

वेद-मन्त्रों के स्वरों का ज्ञान और उच्चारण किस प्रकार होता है? - ''ऐसे ही व्याकरणादि शास्त्रों के बोध से उदात्त, अनुदात्त, स्वरित, एकश्रुति, आदि स्वरों का ज्ञान और उच्चारण तथा पिङ्गल सूत्र से छन्दों और षड्जादि स्वरों का ज्ञान अवश्य करना चाहिए, जैसे ''अग्निमीळे.'' यहाँ अकार के नीचे अनुदात्त का चिह्न, (ग्नि) उदात्त है, इसलिए उस पर चिह्न नहीं लगाया गया है, (मी) के ऊपर स्वरित का चिह्न है, (ळे) प्रचय और एकश्रुति स्वर है, यह बात ध्यान में रखना।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रतिज्ञा विषय

एक वेद क्यों नहीं? - **(१)** ''(इसके दो हेतु हैं, एक तो यह है कि) भिन्न-भिन्न विद्या जानने के लिए, अर्थात् जो तीन प्रकार की गान विद्या है (उसके जानने के लिए वेदों का विभाग किया गया है), एक तो यह कि उदात्त, षड्जादि स्वरों का उच्चारण द्रुत, अर्थात् शीघ्रवृत्ति में होता है, दूसरी मध्यम वृत्ति जैसा कि यजुर्वेद के स्वरों का उच्चारण ऋग्वेद के मन्त्रों से दूने काल में होता है, तीसरी विलम्बित वृत्ति है, जिसमें प्रथम वृत्ति से तिगुना काल लगता है, जैसा कि सामवेद के स्वरों के उच्चारण वा गान में, फिर इन्हीं तीनों वृत्तियों के मिलाने से अथर्ववेद का भी उच्चारण होता है, परन्तु इसका द्रुतवृत्ति में उच्चारण अधिक होता है इसलिए वेदों के चार विभाग हुए हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

(२) दूसरा हेतु यह है कि- ''ऋग्वेद में सब पदार्थों के गुणों का प्रकाश किया है, जिससे उनमें प्रीति बढ़कर उपकार लेने का ज्ञान प्राप्त हो सके, क्योंकि बिना प्रत्यक्ष ज्ञान के संस्कार और प्रवृत्ति का आरम्भ नहीं हो सकता और आरम्भ के बिना यह मनुष्य-जन्म व्यर्थ ही चला जाता है, इसलिए ऋग्वेद की गणना प्रथम ही की है तथा यजुर्वेद में क्रिया-काण्ड का विधान लिखा है, सो ज्ञान के पश्चात् ही कर्त्ता की प्रवृत्ति यथावत् हो सकती है, क्योंकि जैसा ऋग्वेद में गुणों का कथन किया है, वैसा ही यजुर्वेद में अनेक विद्याओं के ठीक-ठीक विचार करने से संसार में

व्यवहारी पदार्थों से उपयोग सिद्ध करना होता है, जिनसे लोगों को नाना प्रकार का सुख मिले। क्योंकि जब तक कोई क्रिया विधि-पूर्वक नहीं की जाय, तब तक उसका अच्छी प्रकार भेद नहीं खुल सकता इसलिए जैसा कुछ जानना वा कहना, वैसा ही करना भी चाहिए, तभी ज्ञान का फल और ज्ञान की शोभा होती है तथा यह भी जानना आवश्यक है कि जगत् का उपकार मुख्य करके दो ही प्रकार का होता है, एक आत्मा का और दूसरा शरीर का, अर्थात् विद्यादान से आत्मा और श्रेष्ठ नियमों से उत्तम पदार्थों की प्राप्ति करके शरीर का उपकार होता है, इसलिए ईश्वर ने ऋग्वेदादि का उपदेश किया है कि जिनसे मनुष्य लोग ज्ञान और क्रिया-काण्ड को पूर्ण रीति से जान लेवें।''

''तथा सामवेद से ज्ञान और आनन्द की उन्नति और अथर्ववेद से सर्वसंशयों की निवृत्ति होती है, इसलिए चार विभाग किये हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

पहला ऋग्, फिर यजुः, फिर साम, और फिर अथर्व इस प्रकार से चार वेद क्यों गिने जाते हैं? - ''जब तक गुण और गुणी का ज्ञान मनुष्यों को नहीं होता, तब पर्यन्त उनमें प्रीति से प्रवृत्ति नहीं हो सकती और इसके बिना शुद्ध क्रियादि के अभाव से मनुष्यों को सुख भी नहीं हो सकता था इसलिए वेदों के चार विभाग किए हैं कि जिससे प्रवृत्ति हो सके। क्योंकि जैसे इस गुण-ज्ञान विद्या को जनाने से पहिले ऋग्वेद की गणना योग्य है, वैसे ही पदार्थों के गुण-ज्ञान के अनन्तर क्रिया-रूप उपकार करके सब जगत् का अच्छी प्रकार से हित सिद्ध हो सके, इस विद्या के जानने के लिए यजुर्वेद की गिनती दूसरी बार की है। ऐसे ही ज्ञान, कर्म और उपासना काण्ड की वृद्धि वा फल कितना और कहाँ तक होना चाहिए, इसका विधान सामवेद में लिखा है, इसलिए उसको तीसरा गिना है। ऐसे ही तीनों वेदों में जो-जो विद्या हैं, उन सबके शेष भाग की पूर्ति, विधान, सब विद्याओं की रक्षा और संशय निवृत्ति के लिए अथर्ववेद को चौथा गिना है। सो गुण-ज्ञान क्रिया-विज्ञान, इनकी उन्नति तथा रक्षा को पूर्वापर क्रम से जान लेना? अर्थात् ज्ञान-काण्ड के लिए ऋग्वेद, क्रियाकाण्ड के लिए यजुर्वेद, इनकी उन्नति के लिए सामवेद और शेष अन्य शिक्षाओं के प्रकाश करने के लिए अथर्ववेद की, प्रथम, दूसरी, तीसरी और चौथी करके संख्या बाँधी है। क्योंकि (**ऋच स्तुतौ**) (**यज्, देवपूजा, सङ्गतिकरणदानेषु**) (**षोन्तःकर्मणि**) और (**साम सान्वप्रयोगे**) (**थर्वतिश्चरतिकर्मा तत्प्रतिषेधः**) इन अर्थों के विद्यमान होने से चार वेदों अर्थात् ऋग, यजु, साम और अथर्व की यह चार संज्ञा रखी हैं तथा अथर्ववेद का प्रकाश ईश्वर ने इसलिए किया है कि जिससे तीनों वेदों की अनेक विद्याओं के सब विघ्नों का निवारण और उनकी गणना अच्छी प्रकार से हो सके।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

वेदों में जो अष्टक, अध्याय, मण्डल, सूक्त, षट्क, काण्ड, वर्ग, दर्शाति, त्रिक और अनुवाक् रखे हैं, यह किसलिए? - ''इनका विधान इसलिए है कि जिससे पठन-पाठन और मन्त्रों की गिनती बिना कठिनता से जान ली जाय तथा सब विद्याओं के पृथक्-पृथक् प्रकरण निर्भ्रमता के साथ विदित होकर सब विद्या-व्यवहारों में गुण और गुणी के ज्ञान द्वारा मनन और पूर्वापर स्मरण होने से अनुवृत्तिपूर्वक आकांक्षा, योग्यता, आसक्ति और तात्पर्य सबको विदित हो सके, इत्यादि प्रयोजन के लिए अष्टकादि किए हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

मन्त्रों के साथ छन्द क्यों लिखा होता है? - ''जिस-जिस मन्त्र का जो-जो छन्द है, सो भी उसके साथ इसलिए लिख दिया गया है कि उनसे मनुष्यों को छन्दों का ज्ञान भी यथावत् होता रहे तथा कौनसा छन्द किस-किस स्वर में गाना चाहिए, इस बात को जनाने के लिए उनके साथ में षड्जादि स्वर लिखे जाते हैं, जैसे गायत्री छन्द वाले मन्त्रों को षड्ज स्वर में गाना चाहिए। ऐसे ही और-और भी बता दिए हैं कि जिससे मनुष्य लोग गान-विद्या में भी प्रवीण हों, इसलिए वेद में प्रत्येक मन्त्रों के साथ उनके षड्ज आदि स्वर लिखे जाते हैं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

भला कई-कई मन्त्र चारों वेदों में क्यों आते हैं? - ''कहीं-कहीं एक मन्त्र का चार वेदों में पाठ करने का यही प्रयोजन है कि वह पूर्वोक्त चारों प्रकार की गान-विद्या में

गाया जावे। एक कारण तो यह है और दूसरा कारण यह भी है कि प्रकरण भेद से कुछ-कुछ अर्थभेद भी होता है, इसलिए कितने ही मन्त्रों का पाठ चारों वेदों में किया जाता है।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

वेदों के मन्त्र कितने प्रकार के अर्थों को जनाते हैं? - ''वेदों के सब मन्त्र तीन प्रकार के अर्थों को कहते हैं। कोई परोक्ष, अर्थात् अदृश्य अर्थों को, कोई प्रत्यक्ष अर्थात् दृश्य अर्थों को और कोई अध्यात्म अर्थात् ज्ञान गोचर आत्मा और परमात्मा को। उनमें से परोक्ष अर्थ के कहने वाले मन्त्रों में प्रथम पुरुष अर्थात् अपने और दूसरे के कहने वाले 'जो सो और वह' आदि शब्द हैं तथा उनकी क्रियाओं के अन्ति, भवति, करोति, पचतीत्यादि प्रयोग हैं एवं प्रत्यक्ष अर्थ के कहने वालों मध्यम पुरुष, अर्थात् तू, तुम आदि शब्द और उनकी क्रिया के असि भवसि, करोसि पचसीत्यादि प्रयोग हैं तथा अध्यात्म अर्थ के कहने वाले मन्त्रों में उत्तम पुरुष अर्थात् 'मैं', हम आदि शब्द और उनकी अस्मि, भवामि, करोमि, पचामित्यादि क्रिया आती है। तथा जहाँ स्तुति करने के योग्य परोक्ष और स्तुति करने वाले प्रत्यक्ष हों, वहाँ भी मध्यम पुरुष का प्रयोग होता है। यहाँ यह अभिप्राय समझना चाहिए कि व्याकरण की रीति से प्रथम, मध्यम और उत्तम अपनी-अपनी जगह होते हैं, अर्थात् जड़ पदार्थों में प्रथम, चेतन में मध्यम वा उत्तम होते हैं, सो यह तो लोक और वेद के शब्दों में साधारण नियम है, परन्तु वेद के प्रयोगों में इतनी विशेषता होती है कि जड़ पदार्थ भी प्रत्यक्ष हों तो वहाँ निरुक्तकार के उक्त नियम से मध्यम पुरुष का प्रयोग होता है और इससे यह भी जानना आवश्यक है कि ईश्वर ने संसारी जड़ पदार्थों को प्रत्यक्ष कराके केवल उनसे अनेक उपकार लेना जनाया है, दूसरा प्रयोजन नहीं है, परन्तु इस नियम को नहीं जान कर सायणाचार्य आदि वेदों के भाष्यकारों तथा उन्हीं के बनाये हुए भाष्यों के अवलम्ब से यूरोप देशवासी विद्वानों ने भी जो वेदों के अर्थों को अन्यथा कर दिया है, सो यह उनकी भूल है और इसी से वे ऐसा लिखते हैं कि वेदों में जड़-पदार्थों की पूजा पाई जाती है, जिसका कि कहीं चिह्न भी नहीं है।'' **-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय**

वेदार्थ करने में विशेष नियम कौन से हैं? - ''वेदादि शास्त्रों में जो-जो शब्द पढ़े जाते हैं, उन सबके बीच में यह नियम है कि जिस विभक्ति के साथ वे शब्द पड़े हों, उसी विभक्ति से अर्थ कर लेना, यह बात नहीं है, किन्तु जिस विभक्ति से शास्त्र मूल, युक्ति और प्रमाण के अनुकूल अर्थ बनता हो, उस विभक्ति का आश्रय करके अर्थ करना चाहिए, क्योंकि वेदादि शास्त्रों में शब्दों के प्रयोग इसलिए होते हैं कि उनके अर्थों को ठीक-ठीक जान उनसे लाभ उठावें।''

''वेदों में षष्टी विभक्ति के स्थान में चतुर्थी हो जाती है लौकिक ग्रन्थों में नहीं।''

-ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय

वेदार्थ करने में विशेष नियम क्यों हैं? - ''यह सब ऋषियों का प्रबन्ध इसलिए है कि शब्द सागर अथाह है। इसकी थाह व्याकरण से नहीं मिल सकती। जो कहें कि ऐसा व्याकरण क्यों नहीं बनाया कि जिससे शब्द सागर के पार पहुँच जाते, तो यह समझना कि कितने ही पोथा बनाते और जन्म जन्मान्तरों भर पढ़ते तो भी पार होना दुर्लभ हो जाता, इसलिए यह सब पूर्वोक्त प्रबन्ध ऋषियों ने किया है, जिससे शब्दों की व्यवस्था मालूम हो जाये।'' - **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, प्रश्नोत्तर विषय**

क्या वेदमन्त्रों के अनेक अर्थ हो सकते हैं? - ''इस आर्य्याभिविनय'' ग्रन्थ में मुख्यतया वेद मन्त्रों का परमेश्वर सम्बन्धी एक ही अर्थ संक्षेप से किया गया है, दोनों अर्थ करने से ग्रन्थ बढ़ जाता इससे व्यवहार-विद्या सम्बन्धी अर्थ नहीं किया गया, परन्तु वेद के भाष्य में यथावत् विस्तारपूर्वक परमार्थ और व्यवहारार्थ, यह दोनों अर्थ सप्रमाण किये जायेंगे...और वेदों के महत्त्व तथा वेदों का अनन्तार्थ जानने से मनुष्यों को महालाभ और वेदों में यथावत् प्रीति होगी।'' **-आर्य्याभिविनय भूमिका**

वेद संस्कृत भाषा में क्यों प्रकाशित किये गये? - ''जो किसी देश-भाषा में प्रकाशित करता, तो ईश्वर पक्षपाती हो जाता क्योंकि जिस देश की भाषा में प्रकाशित करता, उनको सुगमता और विदेशियों को कठिनता वेदों को पढ़ने-पढ़ाने की होती। इसलिए संस्कृत ही में प्रकाश किया, जो किसी देश की भाषा नहीं और वेद-भाषा अन्य सब भाषाओं का कारण है, उसी में वेदों का प्रकाश किया।''

-सत्यार्थप्रकाश

परोपकारिणी सभा का स्थापना समारोह

पं. विरजानन्द दैवकरणि

ऋषियों की कृति आर्ष कहलाती है। इस युग के ऋषि स्वामी दयानन्द सरस्वती हुए हैं। संस्था में इनकी प्रथम कृति आर्यसमाज है, जो सन् १८७५ ई. (चैत्र शुक्ला पंचमी संवत् १९३१) को मुम्बई में स्थापित किया गया था।

दूसरी आर्ष संस्था परोपकारिणी नामक सभा है। इसका जन्म १६ अगस्त १८८० ई. को मेरठ में हुआ था। उस समय इस सभा के १८ सदस्य थे। इन सदस्यों की सभा को स्वामी दयानन्द ने यह अधिकार प्रदान किया था कि मेरे शरीर-त्याग के पश्चात् मेरे वस्त्र, धन, पुस्तक तथा वैदिक यन्त्रालय पर इस सभा का अधिकार रहेगा। उस समय सभा का प्रधान लाला मूलराज (लाहौर वाले) को बनाया था। इस सभा में उस समय दो विदेशी भी सदस्य थे, १-कर्नल एच.एस. ऑल्कॉट तथा २-मैडम एच.पी. ब्लावत्सकी। कालान्तर में इन दोनों से वैदिक सिद्धान्तों के विषय में मतभेद हो गया था। इस कारण ये दोनों व्यक्ति ऋषि जी के सिद्धान्तों से मेल नहीं खाते थे। फलतः विचार-विमर्श के उपरान्त ऋषि जी ने परोपकारिणी सभा का गठन दूसरी बार २७ फरवरी १८८३ ई. को किया और इस सभा में २३ सदस्यों को नामांकित किया। उस समय इस सभा का प्रधान उदयपुर के महाराणा श्री सज्जनसिंह जी को बनाया गया था। 'यथा राजा तथा प्रजा' इस लोकोक्ति के अनुसार ऋषि जी की इच्छा थी कि यदि महाराणा सज्जनसिंह जी इस सभा के प्रधान बन गये तो उनके राज्य की प्रजा भी उनका अनुकरण करके वैदिक धर्म में दीक्षित हो सकती है। साथ ही ये महाराणा राजस्थान के अन्य देशीय राज्यों को भी इस सभा से जुड़ने का प्रयत्न कर सकेंगे, इससे वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार को बल मिलेगा।

अस्तु! उस समय ऋषि जी ने परोपकारिणी सभा के तीन उद्देश्य निश्चित किये थे-

१. वेद और वेदांग आदि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उनकी व्याख्या करने-कराने, पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, छापने-छपवाने का कार्य करना।

२. वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य का त्याग कराना।

३. आर्यावर्तीय और दीन मनुष्यों के संरक्षण, पोषण और सुशिक्षण का कार्य करना।

ऋषि जी की इच्छानुसार ये तीनों कार्य अपनी स्थापना से लेकर आज तक सभा अजस्रूप से करती आ रही है, परन्तु इस सभा ने अपना स्थापना दिवस कभी नहीं मनाया। किन्तु महर्षि दयानन्द सरस्वती के निधन दिवस दीपावली तथा उसके निकटवर्ती अवकाश के दिनों में ही परोपकारिणी सभा का वार्षिक अधिवेशन मनाया जाता रहा है। इसके पश्चात् यह प्रथम ही अवसर ऐसा है जब परोपकारिणी सभा अपना १३७ वाँ स्थापना दिवस प्रथम बार मना रही है। ऋषि जी के प्रारम्भिक उद्देश्यों को तो सभा क्रियान्वित कर ही रही है, इसके साथ ही सभा ने अन्य भी परोपकार के कार्य प्रारम्भ कर दिये हैं-

१. दैनिक सन्ध्या-यज्ञ-उपदेश करना।

२. आर्षपाठ विधि के अनुसार गुरुकुल की स्थापना करके छात्रों को शिक्षित करना।

३. रोगी व्यक्तियों की निःशुल्क चिकित्सा हेतु औषधालय की स्थापना।

४. गायों के संरक्षण, वर्धन और पालनार्थ गोशाला का निर्माण।

५. आसन, व्यायाम, प्राणायाम और साधना हेतु शिविर लगाना।

६. धर्मप्रधान भावना वाले यात्रियों के लिए अतिथिशाला।

७. सभी अतिथियों को भोजन और आवास निःशुल्क प्रदान किया जाता है।

इन प्रकल्पों के साथ परोपकारिणी सभा निरन्तर प्रगति कर रही है।

श्रद्धालु सज्जनों से निवेदन है कि ऋषि-मेले पर पधारने की भाँति इस प्रथम स्थापना दिवस पर भी उपस्थित होकर सभा का उत्साहवर्धन करें। - **गुरुकुल झज्जर, हरियाणा**

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी
परोपकारिणी सभा का

स्थापना दिवस

दिनांक २७ फरवरी २०१९ को सोल्लास मनाया

मुख्य अतिथि – श्री जगदीश प्रसाद शर्मा (प्रबन्ध सम्पादक, दैनिक भास्कर समूह)
मुख्य वक्ता – श्री सज्जनसिंह कोठारी लोकायुक्त राजस्थान
समय – प्रातः १० से १ बजे तक
स्थान – ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

इस अवसर पर आप सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित है

निवेदक

डॉ. वेदपाल — प्रधान
कन्हैयालाल आर्य — मन्त्री

अपील

'सत्यार्थप्रकाश' जैसी क्रान्तिकारी पुस्तक के प्रति किस आर्य की श्रद्धा नहीं होगी और कौन वैदिकधर्मी यह नहीं चाहेगा कि यह पुस्तक हर मनुष्य के हाथ में होनी चाहिये? आर्यों की इस तीव्र अभिलाषा को परोपकारिणी सभा गत ५ वर्षों से साकार रूप देने में प्रयासरत है। साथ में यह भी चाहती है कि यह अमूल्य पुस्तक आकार-प्रकार में भी आकर्षक ही हो। इन सबको ध्यान में रखकर सभा ने विश्व पुस्तक मेले में इसे ऐसे व्यक्तियों में वितरित करने का निश्चय किया जिन तक यह अभी नहीं पहुँच पाई थी। इस कार्य में परोपकारिणी सभा तो एक माध्यम मात्र है, मुख्य वितरक आर्यजन ही हैं। विश्व पुस्तक मेला- २०१९ का कुछ ही समय शेष है। अतः आर्यों से अपील है कि अधिक से अधिक लोगों तक सत्यार्थ पहुँचे, इसके लिये मुक्त हस्त से सहयोग करें। सत्यार्थप्रकाश के साथ-साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र भी निःशुल्क वितरित किया जायेगा। आप जितनी प्रतियाँ अपनी ओर से बंटवाना चाहें, उतनीं पुस्तकों पर आपका नाम छापा जायेगा।

एक प्रति की लागत- १००रु.

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**
IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**
IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

कभी ऐसा भी हुआ था
(पण्डित रामचन्द्र देहलवी)

सोमेश पाठक

किसी मेरु की वह दशा कि जो वर्षा ऋतु के अन्तराल होती है, महापुरुषों के धरती पर जीवन्त होने की दशा से मेल खाती प्रतीत होती है। वृक्षों की हरियाली अपने सौन्दर्य पर इठलाती है। झरनें फूटने लगते हैं और उनके गान कवियों के हृदयों में झंकृति पैदा करते हैं। सुप्त शब्द जो अब तक आकाश के अवकाश में अपना स्थान घेरे थे पूरे बल के साथ अपनी चेतना के प्रदर्शन में खड़े हो उठते हैं, और परिणाम यह कि काव्य निर्मित होता है। सारी प्रकृति उस काव्य का पाठ करती है। कलियाँ झूमती हैं, बदलियाँ नगमें गाती हैं। अहो रूपम् अहो ध्वनि। पर अफसोस! ऋतु का आना तो उसके जाने के लिये था। अब न कोई काव्य होगा और न गान। हर ओर शुष्कता का पहरा होगा। अब कवियों की लेखनी इतिहास के वीर थामेंगे और उनकी सारी शक्ति, सारा पुरुषार्थ इस बात को बताने में खर्च होगा कि 'कभी ऐसा भी हुआ था।'

कहते हैं कि नीमच छावनी (मध्यप्रदेश) में सन् १८८१ में रामनवमी के दिन मुंशी छोटेलाल जी के घर एक पुत्र का जन्म हुआ। जन्म रामनवमी के दिन हुआ इसलिये पुत्र का नाम श्री रामचन्द्र रखा गया। यही रामचन्द्र आगे चलकर पं. रामचन्द्र देहलवी नाम से जाने गये। पण्डित जी की माता का नाम श्रीमती रामदेवी जी (रामदेई जी) था। पण्डित जी से पूर्व पैदा हुयी तीन सन्तानों की मृत्यु हो चुकी थी। इस कारण माता का पण्डित जी के प्रति विशेष स्नेह था। पर यह स्नेह लम्बे काल तक न चल सका। मात्र सात वर्ष की आयु में पण्डित जी को असहाय छोड़कर माता चिरनिद्रा में लीन हो गयीं। इसके बाद पिता ने पुनर्विवाह कर लिया।

पण्डित जी का प्रारम्भिक अध्ययन नीमच के ही एक प्राइमरी स्कूल में हुआ था। यहीं आपने अंग्रेजी, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद आप अजमेर चले गये तथा डी.ए.वी स्कूल से मिडिल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की तथा इन्दौर जाकर इन्दौर कॉलेज से एण्ट्रेन्स की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

१८ वर्ष की अल्पायु में ही पण्डित जी का विवाह हो गया। पण्डित जी की जीवनसंगिनी का नाम श्रीमती कमला देवी था। जो कि दिल्ली की रहने वाली थीं। गृहस्थ के उतार-चढ़ाव भरे मार्ग पर आर्थिक संकटों से जूझते हुये पण्डित जी आगे बढ़ने लगे। पण्डित जी को प्रथम संतान के रूप में एक पुत्री की प्राप्ति हुई। इसके बाद आप अपनी पुत्री व पत्नी को लेकर श्वसुर के पास दिल्ली चले गये। पण्डित जी के पाँच सन्तानें पैदा हुईं, जिनमें चार पुत्रियाँ थीं और एक पुत्र। उनमें से तीन पुत्रियां ही जीवित बचीं थीं। जब पण्डित जी के पुत्र की मृत्यु हुयी तो श्रीमती कमला देवी जी को गहरा आघात लगा, जो कि स्वाभाविक है। वह पुत्र महज १८ दिन जीवित रहा इस धक्के के कारण वे रुग्ण रहने लगीं। और लगभग डेढ़ वर्ष अत्यन्त रुग्ण रहने के कारण उनकी भी जान पर आ बनी। इस समय पण्डित जी की आयु मात्र ३६ वर्ष की थी, परन्तु उनके मस्तिष्क में पुनर्विवाह का ख्याल तक न आया।

इसके बाद पण्डित जी ने अपना जीवन धर्म के प्रचार में लगाना उचित समझा। इतिहास जानता है कि ऐसा ऊहावान् फिर कभी देखा न गया। आर्यसमाज में जब भी शास्त्रार्थ-महारथियों की चर्चा होती है तो पण्डित रामचन्द्र देहलवी का नाम शीर्षस्थ पंक्ति में रखा जाता है। पण्डित जी वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ विद्वान् थे। साथ ही कुरान और बाइबिल पर भी असाधारण अधिकार रखते थे। विरोधी आपकी इस प्रतिभा को देखकर भौंचक्के रह जाते थे। पण्डित जी कमाल के वक्ता थे और कमाल के लेखक। अपने वक्तव्य में बड़े रोचक संस्मरण और हास्य चुटकियाँ लिया करते थे जिससे श्रोताओं में हँसी की लहर दौड़ जाती थी। यही हाल उनका शास्त्रार्थों में रहा करता था। एक बार उनका किसी

मौलाना से शास्त्रार्थ हो रहा था। पण्डित जी ने मौलाना से पूछा, ''आज कौन सा दिन है?'' मौलाना बड़ी सहजता से बोले, ''आज जुमेरात है।'' इस पर पण्डित जी ने कहा, ''मौलाना! मैं तो दिन पूछ रहा हूँ और आज रात बता रहे हैं।'' इस बात पर श्रोता खिलखिलाकर हँस पड़े।

पण्डित जी प्रत्युत्पन्न मति थे। उनकी ऊहा और पाण्डित्य की गहराई का पता लगा पाना मुश्किल था। एक समय की बात है, मुसलमानों से शास्त्रार्थ हो रहा था। पण्डित जी बोले, ''आप लोग कोई एक तो ऐसा दृष्टान्त दें जिससे अभाव से भाव की उत्पत्ति सिद्ध हो सके।'' इस पर मौलवी सईद साहब बोले, ''आप दूसरा खुदा ला दीजिये। मैं नेस्ती (अभाव) से हस्ती (भाव) की मिसाल (उदाहरण) ला दूँगा।''

अब पण्डित जी की बारी थी। वे बोले, ''आपका यह कहना कि मैं दूसरा खुदा खोजकर लाऊँ तो आप अभाव से भाव का उदाहरण ला देंगे, इसका क्या अर्थ निकला? यही ना! कि अभाव से भाव का होना ऐसा ही असम्भव है जैसा कि दूसरे सृष्टिकर्त्ता की सत्ता लाना अथवा बनाना।'' ऐसी प्रतिभा थी पण्डित रामचन्द्र देहलवी की, कि विरोधी के शब्दों में ही उसका उत्तर दे देवें। आज ऐसे लोग खोजने से भी नहीं मिलते हैं। पण्डित जी सिर्फ विद्वान् व शास्त्रार्थ महारथी ही नहीं थे बल्कि कट्टर देशभक्त और क्रान्तिकारी भी थे। उन्होंने हैदराबाद-सत्याग्रह में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था। पण्डित जी सात बार हैदराबाद प्रचारार्थ गये। वहाँ उनके १२५ व्याख्यान हुये। पं. नरेन्द्र जी जैसे क्रान्तिकारी भी पण्डित रामचन्द्र देहलवी की देन थे। पण्डित जी ने हजारों व्यक्तियों को धर्म-परिवर्तन से रोका है। अनेकों घटनायें हैं जिनका उल्लेख किया जा सकता है, परन्तु विस्तार भय के कारण हम ऐसा नहीं कर रहे हैं। पण्डित जी के विषय में विस्तृत जानकारी आदरणीय राजेन्द्र 'जिज्ञासु' जी ने उनकी जीवनी में लिपिबद्ध कर दी है।

जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं कि ऋतु आती ही जाने के लिये है। पण्डित जी दिल्ली के आर्यसमाज सदर बाजार जा रहे थे। पीछे से किसी टैक्सी वाले ने टक्कर मार दी। जिससे पण्डित जी रिक्शे से उछलकर दूर जा गिरे। उसी दुर्घटना में उन्हें बायें हाथ में कम्पन का रोग हो गया। वृद्ध हो गये थे, अतः दुर्बलता बढ़ती चली गयी और दुर्बलता के कारण रोग भी बढ़ता चला गया। शुरुआत में रोग का ठीक इलाज न करवाया गया और बाद में तो होता ही क्या? अन्ततोगत्वा रोग इतना भंयकर हो गया कि वे चल-फिर और उठ-बैठ भी न पाते थे। घर में जगह-जगह रस्सियाँ बँधवा लीं थीं। जिनके सहारे उठ-बैठ लिया करते थे। अन्तिम समय में पण्डित जी को उनकी इच्छानुसार दीवानहॉल लाया गया। यहीं पण्डित जी ने २ फरवरी १९६८ की रात को साढ़े नौ बजे नश्वर देह का परित्याग कर दिया और निकल पड़े अपनी अनन्त की यात्रा पर। बचा तो सिर्फ ''शुष्कता का पहरा।'' और छोड़ गये इतिहास वेत्ताओं को यह बताने का काम कि ''कभी ऐसा भी हुआ था।''

'महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ' का प्रकाशन

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर साहित्य प्रकाशन का निरन्तर विस्तार कर रही है। महर्षि द्वारा रचित साहित्य को प्राथमिकता से प्रकाशित किया जा रहा है। इसी क्रम में सभा **'महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ'** नामक पुस्तक नये कलेवर में, सुन्दर साज-सज्जा के साथ पुनः प्रकाशित करने जा रही है। यह ग्रन्थ शीघ्र ही छपकर आर्यजनों के हाथों में होगा। इस ग्रन्थ की लागत ५१,०००/-(इक्यावन हजार रुपये) आयेगी। जो सज्जन इस पुस्तक को सम्पूर्ण व्यय देकर अपनी ओर से प्रकाशित कराना चाहें, उनका परिचय चित्र सहित पुस्तक में दिया जायेगा। इस कार्य में मुक्त हस्त से सभा को सहयोग करें।

- मन्त्री

शङ्का समाधान - ४२

डॉ. वेदपाल

शङ्का- १. ओ३म् ध्वज पुराना व रंगहीन हो जाता है, तो उसे उतारकर नया ध्वज लगा देते हैं। **पुराने ध्वज का निपटान कैसे किया जाए?** मैले-कुचैले ध्वज का पोंछा बनाया जाए, नदी में बहा दिया जाए अथवा उसे जला दिया जाए?

२. सन्ध्या के अन्तिम मन्त्र में शिव तथा शिवतर कहा गया है- ''नमः शिवाय च शिवतराय च''। इस मन्त्र में ईश्वर शिवतर के स्थान पर शिवतम क्यों नहीं कहा गया? शिवतम शक्ति/सत्ता को शिवतर तक ही सीमित करने का औचित्य क्या है?

इन्द्रजित् देव, यमुनानगर

समाधान- १. ध्वज प्रतीक है। जिस प्रकार किसी राष्ट्र का ध्वज उसके सिद्धान्तों, नीतियों तथा आदर्शों का प्रतीक होता है, उसी प्रकार धार्मिक जगत् में भी किसी सम्प्रदाय अथवा संस्था के आदर्शों, मन्तव्यों एवं सिद्धान्तों का प्रतीक उसका ध्वज होता है।

वैदिक परम्परा का प्रतीक **'ओ३म्'** जिस वस्त्र-खण्ड (यह वस्त्रखण्ड निश्चित माप=लम्बाई चौड़ाई से युक्त होता है।) पर उल्लिखित कर देते हैं, वह **'ओ३म् ध्वज'** है। यह मात्र वस्त्र-खण्ड या उस पर लिखे कुछ अक्षर मात्र न होकर उसमें अन्तर्निहित भावों का प्रतीक (Symbol) है। अन्तर्निहित भाव प्रत्यायनी (Symbolic) हैं। इन्हीं भावों प्रत्यायनी के संरक्षण के लिए प्रतीक का संरक्षण किया जाता है। जिस प्रकार राष्ट्रीय भावों का प्रतीक राष्ट्रध्वज है, ठीक उसी प्रकार धार्मिक भावों का प्रतीक ओ३म् ध्वज है।

राष्ट्रध्वज के निपटान के सन्दर्भ में जुलाई २००५ में बने 'फ्लैग कोड' में स्पष्ट निर्देश हैं। इसमें पुराने ध्वज को आदरपूर्वक एकान्त स्वच्छ स्थान पर (भीड़-भाड़ से दूर अकेले निपटानकर्त्ता द्वारा) जला देने की व्यवस्था दी गई है।

ओ३म् ध्वज अथवा किसी अन्य प्रतीक के निपटान के विषय में कोई शास्त्रीय निर्देश हमारी दृष्टि में नहीं आया है। **राष्ट्रध्वज के सदृश एकान्त स्वच्छ स्थान पर (भीड़ से अलग अकेले निपटानकर्त्ता द्वारा) उसे जला देना ध्वज निपटान का व्यावहारिक एवं उचित प्रकार दिखाई देता है।** इसके अतिरिक्त पोंछा बनाना या नदी में बहा देना ध्वज के प्रति उपेक्षा/अनादर भाव को व्यक्त करते हैं। **राष्ट्रध्वज के सदृश निपटान करने से ध्वज के अवशेष भी निरादृत नहीं होते हैं।**

२. आपकी यह शङ्का लोक में तरप्/तमप् प्रत्ययों के प्रयोग को देखकर हुई है। लोक में दो वस्तुओं में तुलना करते समय एक को दूसरे से बढ़कर/बेहतर बताने के लिए तरप् एवं ईयसुन् (दोनों में से किसी एक का) प्रयोग होता है। पाणिनीय व्याकरण का नियम है-

'द्विवचन विभज्योपपदे तरबीयसुनौ'

५.३.५७ जैसे **महान्/महत्तर**- विशाल या बड़े अर्थ में महान् तथा उससे भी बढ़कर अर्थात् उससे भी विशाल या बड़े के अर्थ में महत् से तरप् प्रत्यय होकर **'महत्तर'** शब्द निष्पन्न होता है। महाकवि कालिदास कृत अभिज्ञानशकुन्तलम् में कोतवाल की धीवर के प्रति उक्ति है-

'महत्तरस्त्वमिदानीं प्रियवयस्कः संवृत्तः'।

अर्थात् पूर्वापेक्षया मेरा प्रगाढ़ मित्र हो गया है। इसी प्रकार **सुकुमारतरः** अर्थात् सुकुमार तो दोनों ही हैं, किन्तु यह इनमें अतिशय सुकुमार है-

'अयमनयोरतिशयेन सुकुमारः=सुकुमारतरः'।

उपर्युक्त महत्तर एवं सुकुमारतर के सदृश है- **शिवतर**। शिव का अर्थ है- मंगलकर्त्ता- कल्याणकारक। समग्र ब्रह्माण्ड में जितनी भी कल्याणकारिणी शक्तियाँ हैं, वे सब शिव हैं। ईश्वर भी कल्याणकर्त्ता-मंगलप्रद है। अतः शिव है, किन्तु दोनों (१. ब्रह्माण्ड की मांगलिक

शक्तियाँ/पदार्थ तथा २. ईश्वर) में ईश्वर अन्य की अपेक्षा अधिक कल्याणकर्त्ता है। इसलिए शिवतर कहना सम्भव है -**द्वाविमौ शिवौ, अयमनयोरतिशयेन शिवः=शिवतरः** ।

शिवाय एवं शिवतराय दोनों रूप क्रमशः शिव एवं शिवतर के चतुर्थी विभक्ति एकवचन हैं। '**नमः स्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषट् योगाच्च**' अष्टा. २.३.१६ सूत्र से 'नमः' के योग में शिव एवं शिवतर से चतुर्थी विभक्ति होकर '**शिवाय**' एवं '**शिवतराय**' पद निष्पन्न होते हैं।

अतिशय अर्थ में सामान्यतः '**अतिशायने तमबिष्ठनौः**' अष्टा. ५.३.५५ तमप्/इष्ठन् प्रत्यय विहित हैं, किन्तु अपवाद रूप में तरप्/ईयसुन् का विधान है। काशिकाकार का कथन द्रष्टव्य है- ''**द्वयोरर्थयोर्वचनं द्विवचनम्। विभक्तव्यो विभज्यः, निपातनाद्यत्। द्वयर्थे विभज्ये चोपपदे प्रातिपदिकात्तिङन्ताच्चातिशायने तरबीयसुनौ प्रत्ययौ भवतः। तमबिष्ठनोरपवादः**''- **द्र. 'द्विवचन...सुनौ'- अष्टा. ५.३.५७ पर काशिकावृत्तिः।**

तमप्/इष्ठन् उत्सर्ग हैं और तरप्/ईयसुन् अपवाद। उत्सर्ग से अपवाद बलवान् होता है। मन्त्र में तरप् प्रत्यय का प्रयोग (शिवतर-शिवतराय) साधु प्रयोग है। तमप् (आप द्वारा शङ्का में प्रयुक्त शिवतम पद में) प्रत्यय का प्रयोग भी अतिशय अर्थ में है और तरप् भी यहाँ अतिशय (ऊपर काशिका की रेखांकित पंक्ति देखें) अर्थ में ही प्रयुक्त है। **यहाँ शक्ति को सीमित करने का भाव नहीं है।**

न्यायकारी

जो सदा विचार कर असत्य को छोड़ सत्य का ग्रहण करे, अन्यायकारियों को हटावे और न्यायकारियों को बढ़ावे, अपने आत्मा के समान सबका सुख चाहे सो ''न्यायकारी'' है, उसको मैं भी ठीक मानता हूँ।

जातिवाद अब नहीं पनपने देना

डॉ. रामवीर

मेरे मित्रो! जातिवाद को अब तो विदा करो,
मानव-मानव में समानता की दृढ नींव धरो।
न तो जन्म से बड़ा है कोई न ही जन्म से नीचा,
भिन्न-भिन्न वर्णों के पुष्पों से भरपूर बगीचा।
एक युक्त है बौद्धिक-बल से दूजा तनु बलधारी,
क्षमताभेद से कभी हुआ था वर्णभेद यहाँ जारी।
कर्माधारित उस विभेद पर मत अभिमान करो,
जो बेचारे पिछड़ गये हैं उनका ध्यान धरो।
जातिवाद की बातें नवयुग में लगती हैं बासी,
प्रजातन्त्र में राजसत्ता अब नहीं किसी की दासी।
ब्राह्मण बचे समादर से अवमान की रक्खे इच्छा,
जरा विचारो आखिर क्यों दी मनु ने ऐसी शिक्षा।
आत्मश्रेष्ठता का घमण्ड ब्राह्मण को पतित करेगा,
शायद मनु की दिव्य दृष्टि ने पहले ही देख लिया था।
एक श्रमिक अपने श्रम द्वारा रोटी रोज कमाता,
ब्राह्मण गंगा नहाकर केवल माला रहता फिराता।
इन दोनों में कौन श्रेष्ठ है और है कौन निकृष्ट,
पूर्वाग्रह यदि छोड़ सको तो उत्तर नहीं है क्लिष्ट।
रोहतक में तो जाट बड़ा है रेवाड़ी में यादव,
अपने घर में खुद ही खुद को बड़ा मानता मानव।
इस स्वारोपित श्रेष्ठवाद को दिल से दूर करो,
अपनो को ही नहीं सभी को पूरा प्यार करो।
आत्मश्रेष्ठता परनिकृष्टता परित्याज्य हैं दोनों,
इन्हीं कुभावों ने पनपाया जर्मनी में हिटलर को।
मन में समता यदि न हो तो बाकी साम्य है नकली,
मनुज मात्र को जो सम समझे वही मनुज है असली।
राजनीति के खेत में जातिवाद की खाद न डालो,
भेदभाव से ऊपर उठकर सबको गले लगा लो।
सबका यह कर्त्तव्य है सबको ही पक्का व्रत लेना,
भारत-भू पर जातिवाद अब नहीं पनपने देना।

८६, सैक्टर ४६, फरीदाबाद, हरियाणा।

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ जनवरी २०१९ तक)

१. श्री कौशल गुप्ता, गाजियाबाद २. श्री रामजीवन मिश्रा एवं श्रीमती द्रौपदी मिश्रा, जयपुर ३. श्री कौशल किशोर पाण्डेय, गाजियाबाद ४. श्री शान्तिस्वरूप गोयल, लुधियाना ५. श्री तेजवीर सिंह एवं श्रीमती बाला त्यागी, नई दिल्ली ६. श्री ओम्प्रकाश लढ्ढा, अजमेर ७.श्रीमती यशोदा रानी सक्सेना, कोटा।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ जनवरी २०१९ तक)

१. श्री माणिकचन्द जैन, डीडवाना, नागौर २. प्रो. मोतीलाल शर्मा, जयपुर ३. श्री गोवर्धनप्रसाद खण्डेलवाल, अजमेर ४. श्री महेश खण्डेलवाल, अजमेर ५. श्री सुरेश खण्डेलवाल, अजमेर ६. श्रीमती सुशीला देवी खण्डेलवाल, अजमेर ७. आचार्य विरजानन्द दैवकरणि, झज्जर, ८. श्रीमती सरोज गोयल, अजमेर।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस

(२७ फरवरी २०१९)

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा परोपकारिणी सभा की स्थापना एक ऐतिहासिक घटना है। स्थापना के साथ-साथ स्वामी जी ने इस सभा को अपना उत्तराधिकारी बनाकर अपने समस्त निजी अधिकार, उद्देश्य एवं वस्तुओं का अधिकार भी सौंप दिया। एक ऋषि द्वारा किये गये इतने बड़े निर्णय की महत्ता को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा की कार्यकारिणी ने सभा का स्थापना दिवस मनाने का निश्चय किया है। यह कार्यक्रम दिनांक २७ फरवरी २०१९ को ऋषि उद्यान में ही मनाया जायेगा। आप सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित हैं।

– मन्त्री

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २७ फरवरी, २०१९ – **परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस**

२. ०१ से ०३ मार्च, २०१९ – **वार्षिकोत्सव जमानी आश्रम, इटारसी,** सम्पर्क- ०७५०९७०६८२८

३. १९ से २६ मई, २०१९ – **आर्यवीर दल शिविर**

४. ०२ से ०९ जून, २०१९ – **आर्य वीराङ्गना शिविर**

५. १६ से २३ जून, २०१९- **योग-साधना शिविर**

६. १३ से २० अक्टूबर, २०१९- **योग-साधना शिविर**

७. ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३

प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ है।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की विशेष व्यवस्था है।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक की शास्त्री, आचार्य परीक्षा की तैयारी भी इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हो जाती है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की नि:शुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य विद्यादेव

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान

पुष्कर रोड, अजमेर।

९८७९५८७७५६

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

(स.प्र. ३)

इस साल की बात

प्रभाकर

रोडवेज बस के पायदान पर पैर रखते ही सामने नज़र पड़ी तो चालक-परिचालक के हौसले का कायल हो गया। इस घोर निराशावादी संसार में ये दो ही तो हैं जो आशावादिता की मिसाल बने हुए हैं। वरना खटारा सी बस की खटारा सी सीट (सबकी बात नहीं कर रहे साहब) के ऊपर भी ''सांसद, विधायक, मान्यता प्राप्त पत्रकार'' की पट्टी लगाने का साहस किसमें है आज, सिवाय इनके। दिल में बस यही उम्मीद है कि कभी तो इस सीट के हकदार इस पर बैठकर सफर करेंगे। जिस युग में नेता और पत्रकार के घर के अहाते में चार-पाँच लग्जरी गाड़ियाँ खड़ी रहती हों, उस युग में भी ये बड़े सब्र से शबरी की तरह अखण्ड आशा के साथ जीते हैं कि 'एक दिन मेरे नेता और पत्रकार आयेंगे, ये जानते हुए भी इनको कभी वनवास नहीं हो सकता।'

खैर, छुटपन की स्मृतियों की पुरानी दबी मटकी से खोटे सिक्कों जैसी दो-तीन घटनायें सुबूत के तौर पर मन में इकट्ठी कीं और जा बैठे उसी सीट पर। पत्रकारिता में मैंने भी पाँचवी-छटी कक्षा में कई पत्र प्रधानाध्यापक के नाम लिखे थे, बुखार आने पर छुट्टी के लिये, पर दिये कभी नहीं। क्योंकि वे पत्र केवल परीक्षा की तैयारी के लिये लिखे गये थे, असल बुखार के बाद तो हमारी शक्ल ही हमारा प्रार्थना-पत्र होती थी। होली से पहली रात में ईंधन इकट्ठा करने वाली टोली और गिल्ली-डण्डा की टीम का कुशल नेतृत्व भी कर चुका था। बाल स्मृतियों के ये गवाह मुझमें बार-बार ये भरोसा पैदा कर रहे थे कि 'असली वाले से भले ही सौ-दो सौ ग्राम कम, पर नेता और पत्रकार तो मैं हूँ।'

परिचालक (कंडक्टर) किराया लेने आया तो उसके चेहरे पर तनिक भी ये मलाल नहीं था कि जिसके लिये यह सीट निर्धारित थी, वह नहीं आया, ना ही चालक (ड्राइवर) के गीयर और स्टेयरिंग पर सधे हुए हाथ और चौतरफा चाक-चौबन्द नज़रों से मलाल की कोई बात नजर आ रही थी। वो बस अपना काम कर रहे थे, फल की चिन्ता उन्हें बिल्कुल नहीं थी। इस प्रकार निष्काम भाव से कर्म करने वाले आज दुर्लभ हैं।''

ये सब सोचते हुए मन दो दिन पहली उस घटना पर चला गया, जब घोर निराशा से भरे एक अनजान आदमी ने मेरे हाथों में किताब देखकर मुझे ऊपर से नीचे तक देखा और कहा-'क्यों अपनी जिन्दगी बरबाद कर रहे हो?' कुछ सोचकर नहीं, बस यूं ही मेरे मुँह से अचानक निकला- 'खाली बैठा था तो सोचा, जिन्दगी बरबाद ही कर लेते हैं।' मेरे जवाब से वो शायद और निराश हो गया और कुछ **फुसफुसाता** हुआ आगे निकल गया। पर उस जगह खड़ा हुआ मैं ऐसा कौन सा अपराध कर रहा था?

(लगभग) छः साल पहले किसी सिरफिरे (डॉ. धर्मवीर) के मन में ख़याल उठा कि दिल्ली में हर साल अलग-अलग मत वाले, लाखों लोगों को अपने गुरु पैगम्बर की पोथी पकड़ा देते हैं। क्या सही है, क्या गलत, कितना लें और कितना छोड़ें-ये समझना भोली-भाली जनता के लिये बड़ा मुश्किल है, वह तो आटा देखकर उसमें मिला रेत भी खा लेती है। तो क्या किया जाये? एक छलनी दी जाये जो मिलावटी आटे से रेत अलग कर सके। जो छन गया वह काम का, जो रह गया, वह मिलावट।

कुरान और बाइबिल समेत सैकड़ों अलग-अलग विचारों में से सही-गलत को अलग-अलग करने के लिये दयानन्द ने एक छलनी तैयार की- '**सत्यार्थप्रकाश**'। छलनी तो मिल गई पर इसे बाँटने के लिये पैसा कहाँ से आये? आर्यों से अपील की और यह कार्य तुरन्त प्रारम्भ हो गया। अगले कई वर्षों तक इस कार्य में पूँजी का भार श्री शिवकुमार चौधरी, इन्दौर वालों ने सहर्ष वहन किया। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

इस वर्ष २०१९ के विश्व पुस्तक मेले में सत्यार्थ प्रकाश वितरित करने के लिये फिर आर्यजनता से अपील की गई। कहने की ही देर थी, आर्यों ने आशानुरूप राशि सभा तक पहुँचा दी। इस तरह तीन हजार सत्यार्थप्रकाश छपकर तैयार हो गये। पर अब एक और समस्या सामने

मुँह फाड़कर खड़ी हो गई। प्रगति मैदान में इस वर्ष स्थान न होने के कारण कई प्रकाशकों के आवेदन निरस्त हो गये, परोपकारिणी सभा के 'वैदिक पुस्तकालय, अजमेर' का नाम भी उसी सूची में विद्यमान था। अब क्या करें? ऐसे में दिल्ली प्रतिनिधि सभा का सहयोग मिला और उन्होंने अपनी स्टॉल पर स्थान दे दिया। दिल्ली सभा का धन्यवाद किये बिना इस विवरण को आगे बढ़ाना असम्भव है।

विश्व पुस्तक मेले में सभा की ओर से सत्यार्थप्रकाश का वितरण शुरु से ही माता ज्योत्स्ना जी के निर्देश में होता रहा है। किसी भी काम को करने के लिये इच्छा से भी ज्यादा अपनेपन की भावना जरूरी है। आज पूरा देश चाहता है कि पूरा देश साफ-सुथरा हो जाये, पर आदमी सफाई केवल अपने घर की करता है, क्योंकि घर उसका अपना है, सड़क तो सबकी है। जिस दिन लग जाता है कि सड़क भी तो अपनी है, सरकार तो हवा में सफर करती है, उस दिन सड़क पर गन्दगी फिंकनी बन्द हो जाती है। पूरी दुनिया मैं और मेरे पर चलती है। पता नहीं क्यों लोग 'स्व-स्वामी सम्बन्ध' के पीछे डण्डा लेकर दौड़ते रहते हैं-अरे ये है! तभी तो मैं हूँ, ये है तभी तो मैं कुछ कर रहा हूँ। जिसका मुझसे कोई वास्ता ही नहीं, मैं क्यों सोचूँगा उसके बारे में?

साढ़े चार सौ कि.मी. ७-८ घण्टे की यात्रा करने के बाद स्टॉल पर किताबों के बीच बैठकर रात एक बजे तक बिना कुछ खाये-पीये परोपकारिणी सभा की सम्मानित सदस्य किताबों पर स्टिकर लगाये, ऐसा तभी हो सकता है, जब बात 'मैं और मेरे' की हो। अगर सभा की सदस्य होने के नाते वो ऐसा करती हैं तो पिछले छः सालों में तीन साल बिना सदस्यता के भी स्थिति यही थी। तब भी रात ८ बजे तक पुस्तक मेले में रहना, फिर दिल्ली मेट्रो की डरा देने वाली भीड़ के साथ पहले प्रगति मैदान, फिर राजीव चौक पर ट्रेन बदलकर विश्वविद्यालय पहुँचना। मुख्य समस्या तो इसके बाद होती थी। वहाँ से केशवनगर जो कि दिल्ली से बिलकुल बाहर जंगल का क्षेत्र है, वहाँ दयानन्द संस्थान (पिता जी का आश्रम) जाने के लिये बस का इन्तजार, बस ना मिली तो ऑटो में जाना। रात ११ बजे के आस-पास कहीं आराम नसीब होता था। सुबह फिर उसी धक्का-मुक्की भरी भीड़ के साथ प्रगति मैदान पहुँचना। एक बार तो वाहन न मिलने के कारण आर्यसमाज जी.टी.बी. नगर में ही सोना पड़ा था। साठ वर्ष की आयु में अकेले इतना सब कुछ! वैसे बात इतनी बड़ी भी नहीं है। अपने काम में हुआ कष्ट, कष्ट लगता ही नहीं है और काम सफल होने पर मिलने वाली खुशी की तो कोई सीमा ही नहीं, इस खुशी के सामने सारे कष्ट छोटे लगते हैं।

हाँ, तो हम लोग जब प्रगति मैदान पहुँचे तो परोपकारिणी सभा द्वारा वितरित किये जाने वाले तीन हजार सत्यार्थप्रकाश के साथ ५-६ हजार सत्यार्थप्रकाश दिल्ली सभा के भी थे। देखकर उत्साह आया। अगले दिन सुबह से वितरण प्रारम्भ होना था, इसलिये जिन दानियों ने सत्यार्थप्रकाश के लिये परोपकारिणी सभा को दान दिया था, उनके नाम का स्टिकर पुस्तकों पर लगाना था। खाने की चिन्ता छोड़ मैं और माता जी रात एक बजे तक वहीं बैठे काम करते रहे। दिल्ली सभा के एक दो कार्यकर्त्ता भी वहाँ पर थे। किताबों की बारीक धूल ने अपना काम किया, फलस्वरूप पहले दो दिन मैं और फिर माता जी संक्रमण का शिकार हो गईं।

अगले दिन सुबह से ही पुस्तक वितरण में दिल्ली के कार्यकर्त्ताओं ने जिस उत्साह से कार्य किया, उससे पहले ही दिन डेढ़ हजार (१५००) किताबें वितरित हो गईं। परोपकारिणी सभा के मन्त्री श्री कन्हैयालाल जी आर्य ने भी पूर्ण सक्रियता के साथ उपस्थिति बनाये रखी। सबके मुखमण्डल पर उत्साह था कि इतने सत्यार्थप्रकाश बँटेंगे, इसके एक प्रतिशत पर भी इसका प्रभाव पड़ा तो परिश्रम सफल है। जो भी आता उसे ग्रन्थ का परिचय देते और हाथों में पुस्तक थमा देते। जब कोई पूछता कि यह किताब किस बारे में है, तो बड़ी समस्या होती। अब एक पंक्ति में क्या जवाब दें- इसमें पाखण्डों का खण्डन है- ये तो अधूरा जवाब है, मूर्त्ति-पूजा का विरोध-ये भी अधूरा, दार्शनिक-वो तो केवल तीन समुल्लास हैं, राजनीति, परिवार, ईश्वर, शिक्षा-व्यवस्था, समाज, धर्म, दर्शन-आखिर क्या बतायें? फिर जैसे जो मन में आता रहा बताते रहे, किसी को कुछ, किसी को कुछ और। एक ही व्यक्ति अगर दो बार आकर मुझसे किताब का विषय पूछ ले तो

मुझ पर गलत सूचना प्रसारित करने का केस लगा सकता था। पर जो भी आया प्रसन्न हुआ, जैसा कि उसके चेहरे से लग रहा था।

इस तरह पूरे हॉल में हर दुकानदार (हिन्दी में तो यही कहते हैं अंग्रेजी मिजाज़ के लोग शायद नाराज हों) और हर खरीदार का चेहरा उत्साह, उमंग और आशा से भरा था। तभी सफेद (सर के बाल समेत) पोशाक में एक सज्जन मेरे सामने आ गये। सज्जन इसलिये कि कपड़े सफेद थे। आजकल यही प्रचलन में है, कपड़ा सफेद नहीं तो धार्मिक नहीं। भगवान् से गलती हो गई जो इतने सारे रंग बना दिये। तो वह सज्जन सामने आये और मुझे ऊपर से नीचे तक देखा। मुझे लगा, शायद इन्हें मेरे कपड़े कुछ ज्यादा ही पसन्द आ गये हैं, या फिर कपड़ों से ईर्ष्या हो रही है, क्योंकि उस दिन गलती से मेरी धोती बड़ी कायदे से बँधी हुई थी और कपड़ों की सफेदी अपने चरम पर, दरअसल मैं भी उस दिन धार्मिक था। इतना सोचकर उनकी तरफ सत्यार्थप्रकाश बढ़ाने ही वाला था कि महाशय मेरे प्रति करुणा भरे स्वर में बोले- क्यों अपना जीवन बरबाद कर रहे हो। क्या होगा इसे बाँटने से? सारे लोग खुश थे, पर इन्हें ना जाने किस बात का गम था। मैंने भी कह दिया कि-कुछ काम नहीं था तो सोचा कि जीवन बरबाद ही कर लेते हैं। वो शायद मेरी बात से सन्तुष्ट नहीं हुए और आगे चल दिये। पहले मुझे आश्चर्य हुआ और थोड़ा गुस्सा भी आया, पर फिर देखा कि सब अपना काम कर रहे हैं, सबके चेहरे किसी अच्छे फल की आशाओं से भरे हुए हैं तो फिर निराशा कहाँ गई? शायद इन महाशय ने सारी निराशा अपने अन्दर समेट ली थी, तभी तो बाकी सब लोग खुश थे। अगर ये बेचारे सज्जन ऐसा ना करते तो फिर ये निराशा सबको परेशान करती और माहौल इतना खुशनुमा ना होता।

पुस्तकें बाँटकर हम लोग वापस आने की तैयारी करने लगे। इस वर्ष के अनुभवों ने अगले वर्ष की योजनाओं के लिये मन को प्रेरित भी कर दिया। पर रोडवेज की उस 'मन्त्री-पत्रकार' की सीट पर बैठे हुए मैं यही सोचता रहा कि 'जब ये रंगीन कपड़ों वाले निराश नहीं, तो वह सफेद रंग से भरा धार्मिक इतना निराश परेशान क्यों था?'

फिर मेरे अन्दर एक नई आशा पैदा हुई-''ये जरूरी थोड़े है कि इस सीट पर पर पहले से बन चुके नेता और पत्रकार ही बैठते हों, हो सकता है इस पर बैठने वाला भविष्य में नेता या पत्रकार बनता हो!''

ऋषि उद्यान, अजमेर

कुछ नाम जिनका सहयोग पुस्तक मेले में निरन्तर रहा-दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री धर्मपाल आर्य और महामन्त्री श्री विनय आर्य जिनकी सहृदयता हमें प्राप्त हुई, मन्त्री श्री वीरेन्द्र सरदाना, इनका चेहरा गम्भीर मुस्कान लिये सबका निरीक्षण करता रहता था। आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान महाशय धर्मपाल आर्य (M.D.H.) इनका आशीर्वाद हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी प्रत्यक्ष रूप में मिला। महामन्त्री श्री सतीश चड्ढा, श्री सुभाष गुगलानी, श्री सुभाष दुआ, श्री शिवकुमार मदान, श्री साहनी, केन्द्रीय सभा के मन्त्री श्री सुखबीर सिंह, श्री एस.पी. सिंह-स्टॉल के नामांकन व साज-सज्जा में यही भागदौड़ करते हैं। श्री सुरेन्द्र चौधरी, श्री रमेशचन्द्र आर्य जी, जो कि बिना किसी थकान के लगातार कार्य करते रहते हैं। आप सबका कृतज्ञ हृदय से धन्यवाद।

जिन्होंने इस पवित्र यज्ञ में अपनी आहुतियाँ दीं

श्री आर. ए. सिंघल, गोरखपुर (उ.प्र.)
मेजर करतार सिंह, हिसार (हरियाणा)
श्री जसवीर सिंह चौहान, बड़ोदरा (गुजरात)
श्री रवीन्द्र लाड, बड़ोदरा (गुजरात)
श्रीमती कमला पांडव धर्मपत्नी डॉ. एस. पी. पांडव, पटियाला (पंजाब)
श्री रामपाल सिंह आर्य एवं श्रीमती आशा सैनी नांगलोई, दिल्ली
श्री कृष्ण कुमार, नीमराना (अलवर) राजस्थान
श्री रामवीर चुग, पंचकूला (हरियाणा)
श्री जगदीश प्रसाद, भरतपुर (राज.)
श्रीमती वेद कुमारी, चण्डीगढ़ (पंजाब)

श्री दयाल दास आहूजा, रायपुर (छत्तीसगढ़)
सुश्री चहक गुप्ता, पंचकूला
सुश्री दीप्ति गुप्ता, पंचकूला
श्रीमती मिथिलेश आर्या, बेंगलूरु
डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, ठाणे (महाराष्ट्र)
श्री सुभाष कथूरिया, हिसार (हरियाणा)
श्री रामजीवन मिश्रा, जयपुर (राजस्थान)
श्री राजाराम त्यागी, रुड़की (हरिद्वार) उत्तराखण्ड
श्री कृष्ण कुमार शर्मा, अलवर (राजस्थान)
श्री जयपाल, ग्राम-तेवड़ी, सोनीपत (हरियाणा)
श्रीमती अरुणा गौड़, अजमेर (राज.)
कर्नल सुरेन्द्र कुमार आर्य, अम्बाला छावनी (हरियाणा)
श्रीमती ललिता गुप्ता, जयपुर (राजस्थान)
श्री वृद्धिचन्द्र गुप्त, जयपुर (राजस्थान)
श्री भगवान सिंह, पंचकूला (हरियाणा)
श्री सतीश कुमार सरदाना, फरीदाबाद (हरियाणा)
प्रो. योगेन्द्र नाथ गुप्ता, जम्मू (जम्मू-कश्मीर)
श्री शान्ति स्वरूप गोयल, लुधियाना (पंजाब)
श्री ओम प्रकाश चुटानी, गुरुग्राम
श्री शंकर लाल मेघवाल, ग्राम मेघसर, चुरु (राज.)
श्री नवीन आर्य, हैदराबाद (तेलंगाना)
श्री इमरता राम चौधरी, बीकानेर (राज.)
महिला आर्यसमाज किशनपोल बाजार, जयपुर (राज.)
श्रीमती सुयशा भास्कर सेन गुप्ता, सीएटल-अमेरिका
डॉ. प्रहलाद एम. ठक्कर, अहमदाबाद (गुजरात)
श्री प्रकाश चतुर्वेदी, मुम्बई (महाराष्ट्र)
श्री शिव सिंह आर्य, औरंगाबाद, पलवल (हरियाणा)
श्री चिरंजीव लाल भंडारी, ठाणे (महाराष्ट्र)
श्री कँवर सिंह दहिया, सोनीपत (हरियाणा)
श्री रामस्वरूप आर्य, ग्राम पिनाम अलवर (राजस्थान)
श्री चेतराम आर्य, ग्राम-पोस्ट मामड़िया अहीर, रेवाड़ी (हरियाणा)
श्री मगन सिंह त्यागी, गाजियाबाद (उ.प्र.)
श्रीमती सावित्री देवी, ग्राम बिढाल, सोनीपत (हरियाणा)
श्री पृथ्वी सिंह शास्त्री, फतेहराहा, सोनीपत (हरियाणा)
श्री जगदीश शर्मा, जालन्धर (पंजाब)
डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी' परोपकारिणी सभा, अजमेर (राज.)
श्रीमती सत्यवती आर्य, भरतपुर (राज.)
श्री देवेन्द्र प्रकाश गुप्ता, वाशी, नवी मुम्बई (महा.)
श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर।

सामवेद पारायण महायज्ञ

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द उद्यान जमानी, इटारसी का वार्षिकोत्सव दिनांक १ से ३ मार्च २०१९ को सामवेद पारायण यज्ञ के साथ आयोजित किया जा रहा है, जिसमें आर्यजगत् के मूर्धन्य विद्वानों के वेदोपदेश का सुअवसर प्राप्त होगा। परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल, उपप्रधान श्री ओम मुनि, मन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य, भजनापदेशक पं. भूपेन्द्र सिंह एवं पं. लेखराज आदि उपस्थित रहेंगे। बाहर से पधारने वाले अतिथियों के आवासादि की व्यवस्था आश्रम की ओर से ही रहेगी।

परोपकारिणी सभा का यह संस्थान मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्र में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार करने में संलग्न है। आर्यजन पधारकर एवं अधिकाधिक सहयोग देकर इसे और अधिक गति प्रदान करें।

निवेदक

परोपकारिणी सभा, अजमेर

महर्षि दयानन्द उद्यान, जमानी, इटारसी (म.प्र.)

सम्पर्क- ०७५०९७०६८२८, ९४२५०४०३१०

लड़कपन के बूढ़े
महात्मा नारायण स्वामी

प्रभाकर

पेड़ कभी नहीं मरता। उसके असंख्य बीज नित नये वृक्ष का सृजन करते हैं। असंख्य छोड़िये, एक अकेला बीज भी करोड़ों नये वृक्षों को पैदा करने का सामर्थ्य रखता है। बीज में एक वृक्ष छिपा होता है, वृक्ष में करोड़ों बीज और हर बीज में फिर एक वृक्ष। किसका सामर्थ्य है जो इसकी सत्ता को मिटाने का विचार भी कर सके? कौन है जो इस जीवन के प्रवाह को रोक सके? वृक्ष के जीवन का आधार उसकी धीरता है। जिस धैर्य से वह अडिग रहकर अपने फल, फूल, पत्तों सहित एक-एक कण से अन्यों की सेवा करता है, यही गुण उसके अगले जीवन की आधारशिला रखता है। उसकी उपयोगिता, उसकी सेवा मानव को मजबूर करती है कि वह भी वृक्ष को बनाये रखने का प्रयत्न करे। पर इस उपलब्धि के पीछे बलिदान छिपा है, इस जीवन कथा के पीछे मृत्यु की कहानी छिपी है। बीज वृक्ष के गुणों को अपने अन्दर समेटकर रह जाये, इतने मात्र से जीवन की सृष्टि नहीं होती। उसे मिट्टी में मिल जाना पड़ता है, गलना पड़ता है, नये अंकुर के लिये खाद का काम करना पड़ता है, तब जाकर एक नई सृष्टि होती है। इस संसार का यही नियम है, बिना मूल्य चुकाए यहाँ कुछ नहीं मिलता। कुछ चाहिये तो मूल्य देने के लिये तैयार रहिये।

हमारे इस लेख का विषय ऐसा ही जीवन है, जिसमें साहस है, धैर्य है, त्याग है, तप है। नेतृत्व की अद्‌भुत क्षमता और स्वयं को न्यौछावर कर विचारों को आगे संप्रेषित करने की योग्यता से भरे महात्मा नारायण स्वामी जी की जयन्ती पर उन्हें हम स्मरण कर रहे हैं।

वसन्त पर्याय है, नवीनता का, उत्साह और उमंग का, और साथ ही जीवन के प्रारम्भ का भी। प्रकृति नया रूप लेती है, पुरानेपन को छोड़कर। इसी ऋतु में एक और नवजीवन प्रारम्भ हुआ माघ सुदी पंचमी सं. १९२२ वि. के दिन। नाम नारायण और स्थान अलीगढ़। शिक्षा अरबी से शुरु हुई, बाद में फारसी और अंग्रेजी भी साथ जुड़ गईं। थोड़ी युवावस्था में जब लोग विषय-भोग की ओर दौड़ लगाते हैं, उस समय युवा नारायण धर्म-कर्म की बातें किया करते थे। संयुक्त प्रान्त में शुद्धि के चलते सनातनियों के विरोध के कारण एक बार मुरादाबाद के कलेक्टर-मजिस्ट्रेट ने इन्हें स्थानीय आर्यसमाज का मन्त्री होने के कारण अपने भोजन कक्ष में बुलाया और कहा कि सनातनी तुम्हें इतनी गालियाँ देते हैं, तुम उनके खिलाफ पुलिस में रिपोर्ट क्यों नहीं लिखवाते? युवा नारायण ने बड़े प्रेम से कहा-**''गाली देने वाले अभी समझते नहीं है कि आर्यसमाज उनकी कितनी सेवा करता है। जब समझने लगेंगे तो अपने आप गालियाँ देना बन्द कर देंगे।''** कलेक्टर ने नौजवान के मुँह से ऐसी भाषा सुनकर कहा-''तुम लड़कपन में ही बूढ़े क्यों हो गये हो?'' वो बुढ़ापा नहीं था, साहस पर शालीनता और बल पर बुद्धि का नियन्त्रण था।

मुरादाबाद की कलेक्ट्रेट के दफ्तर में आप क्लर्क थे। विवाह २३ वर्ष की अवस्था में हो चुका था। अपने गृहस्थ जीवन से आप प्रसन्न थे और सुखी भी। जिसे गृहस्थाश्रम के विषय में कुछ भी संशय हो तो वह नारायण स्वामी जी का यह वाक्य अवश्य पढ़े, वह अपनी आत्मकथा में लिखते हैं-''मैं एक सुखी गृहस्थ था। जब कभी मुझे शहर से बाहर जाना पड़ता था, और अक्सर जाना पड़ता था, तो मुझे सदैव घर लौटने में शीघ्रता करने की चिन्ता करनी पड़ती थी। बाहर जाते हुए यदि कोई कष्ट हुआ तो घर पहुँचते ही वह दूर हो जाता था।'' अपनी सहधर्मिणी के कारण उन्हें जीवन में जो प्रगति मिली, उसे उन्होंने बड़ी सहृदयता से स्वीकार किया है।

म. हरसहाय सिंह के सहयोग व प्रेरणा से आप आर्यसमाज में आये। एक बार छोटी उम्र में जब आप स्कूल में पढ़ते थे तो लोगों से सुना कि एक बड़े सुधारक स्वामी दयानन्द सरस्वती आने वाले हैं। रास्ता स्कूल के सामने से ही गुजरता था तो सभी छात्र स्कूल से बाहर

आकर खड़े हो गये। तब पहली और अन्तिम बार स्वामी जी के दर्शन हुए थे। शाम को उनके व्याख्यान में जाने का मन बना तो एक संस्कृताध्यापक ने यह कहकर रोक दिया कि स्वामी जी अधर्म की बात सुनाया करते हैं, उनके सुनने से पाप लगेगा। इस तरह उस दिन स्वामी जी का व्याख्यान न सुन सके।

पहले मुरादाबाद की आर्यसमाज, फिर संयुक्त प्रान्त की प्रतिनिधि सभा में कार्य किया। पंजाब में उन दिनों घास पार्टी और मांस पार्टी का झगड़ा जोरों पर था। इस बात से नारायण जी बड़े दु:खी हुए। उस विवाद का कारण उन्होंने अपनी डायरी में लिखा–''राय मूलराज ने, जिन्हें आर्यसमाज की तत्कालीन शान्ति और प्रेमभाव का भंग करने वाला शत्रु कहना चाहिये, लाहौर आर्यसमाज के एक अधिवेशन में यह ऐलान कर दिया कि वे वेद के रू से मांस-भक्षण को जायज़ समझते हैं।'' इस घटना के परिणामस्वरूप लाहौर आर्यसमाज में उग्रता-पूर्ण महौल बन गया। परस्पर प्रेम तो जैसे समाप्त ही हो गया था।

संयुक्त प्रान्त में आपने शुद्धि का कार्य प्रारम्भ किया। मुरादाबाद में सनातनियों द्वारा शुद्धि का खूब विरोध किया गया। जाति, कुएँ का पानी, बाजार का सामान, घर में नौकरी, मेहतरों द्वारा साफ-सफाई कार्य-इन सबसे आर्यों को बहिष्कृत कर दिया गया, पर आर्यों ने धैर्य न खोया, जिसका सुखद परिणाम यह हुआ कि सन् १८९३ से १८९८ तक छ: वर्षों में ८७ लोगों को शुद्ध किया गया। एक बार एक सज्जन ने उनसे आकर कहा कि आपको भी बिरादरी से खारिज करने की बात हो रही है। तब नारायण जी ने बड़े लहज़े से जवाब दिया-मैं आर्य हूँ और वे अनार्य, भला आर्यों और अनार्यों की एक बिरादरी कैसे हो सकती है? जब बिरादरी एक है ही नहीं तो बाहर क्या करेंगे।

सन् १८९९ में प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त के वार्षिक बृहदधिवेशन में आपने यह प्रस्ताव रखा कि प्रान्त में एक गुरुकुल खोला जाये। प्रस्ताव पास हुआ। आप गुरुकुल के लिये २० हजार रुपये इकट्ठे करने के लिये ६ महीने की छुट्टी लेकर प्रान्त भर में निकल पड़े। मई-जून की भरी दुपहरी में कभी बैलगाड़ी, कभी पैदल मीलों यात्राएँ कीं। गुरुकुल के प्रस्ताव से लेकर भवन-निर्माण, पाठविधि, अन्तरंग व्यवस्था, अध्यापन आदि हर कार्य में पूर्ण सामर्थ्य से कार्य किया। २६ जनवरी १९२० ई. को गुरुकुल से विदाई लेकर एकान्तवास की तलाश में निकल पड़े। गुरुकुल के कई खट्ठे-मीठे अनुभव आपने अपनी आत्मकथा में लिखे, जो कि पृथक् लेख का विषय हो सकते हैं।

किसी कार्य की सफलता के लिये आप स्वयं को पूरी तरह उस कार्य में विलीन कर देते थे, इसलिये आपने जो भी कार्य हाथ में लिया, उसमें सफलता के अतिरिक्त कोई विकल्प ही नहीं रहता था। १८९९ ई. में आर्य प्रतिनिधि सभा का वार्षिकोत्सव मुरादाबाद में होना था, साथ ही आर्यसमाज का उत्सव भी था। दोनों का प्रबन्ध आपके ही आधीन था। उत्सव के दूसरे दिन छोटे भाई का तार आया कि ''माता जी अधिक रुग्ण हैं,उन्हें देख जाओ।'' आप धर्म संकट में पड़ गये। आखिर मातृप्रेम पर कर्त्तव्य की विजय हुई और जवाब लिख दिया कि चौथे दिन ही अलीगढ़ पहुँच सकूंगा। पर तीसरे दिन एक और चिट्ठी आई कि ''माता जी का देहान्त हो गया है।'' आर्यसमाज के लिये इतना त्याग और तप युवा नारायण की कहानी में है। सन् १९२२ के बाद महात्मा नारायण स्वामी के जीवन में हैदराबाद सत्याग्रह जैसे कई अध्याय हैं, जिनमें तप, त्याग, धैर्य, साहस और अन्तत: सफलता का अनवरत प्रवाह है। महात्मा नारायण स्वामी की की कहानियाँ तो प्राय: समाजों व सम्मेलनों में गाई ही जाती हैं, पर युवा नारायण का जीवन भी कुछ कम नहीं है। आगे फिर कभी...

ऋषि उद्यान, अजमेर

मूर्ख के लक्षण

जो किसी विद्या को न पढ़ और किसी विद्वान् का उपदेश सुन कर बड़ा घमण्डी दरिद्र होकर धनसम्बन्धी दरिद्र होकर धनसम्बन्धी बड़े-बड़े कार्यों की इच्छा वाला और बिना किये बड़े-बड़े फलों की इच्छा करनेहारा है।

(व्य. भा.)

ऐतिहासिक कलम से....

पण्डित चमूपति जी की एक लोकप्रिय गज़ल
जिस मौत से दुनिया प्यार करे

पं. चूमपति ने दार्शनिक, ऐतिहासिक ग्रन्थों के साथ-साथ काव्य में भी अपनी लेखनी चलाई। उनकी 'दयानन्द आनन्द सागर', 'हृदय की भाषा', 'भारत-भक्ति' रचना अद्‌भुत हैं। प्रस्तुत कविता पण्डित जी की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। काव्य-सौन्दर्य के साथ-साथ भावों का एक ज्वार इसमें समाहित है। महर्षि दयानन्द सरस्वती को उदात्त भावों से स्मरण करते हुए पंडित जी की जयन्ती पर यह कविता पाठकों को सादर समर्पित। -**सम्पादक**

ऐ दुनिया बता इससे बढ़कर फिर और हकीक़त[१] क्या होगी?
जाँ दे दी तलाशे हक़[२] के लिए फिर और इबादत[३] क्या होगी?

यूँ तो हर रात की तारीक़ी[४],
देती है पयाम[५] उजाले का।
जिससे ये जहाँ पुरनूर हुआ,
उस रात की कीमत क्या होगी?

ज़हरें भी पिलाईं अपनों ने, खंजर भी चलाए अपनों ने
अपनों के ये ऐहसाँ क्या कम हैं, गैरों से शिकायत क्या होगी?
औरों के लिए मरने वाले, मरकर भी हमेशा जीते हैं।
जिस मौत से दुनिया प्यार करे, उस मौत की अज़मत[६] क्या होगी?

सदियों की खिज़ा[७] के बाद खिला,
इक फूल उसे भी तोड़ दिया।
कलियों के मसलने वालों से,
फूलों की हिफाज़त क्या होगी?
इस हिम्मतो जुर्रत के सदके[८],
इस जज्बाए 'सादिक'[९] पै कुरबाँ।
हक की खातिर, इससे बढ़कर,
बातिल[१०] से बग़ावत क्या होगी।

१. सच्चाई २. सत्य की खोज ३. उपासना ४. अंधेरा ५. संदेश ६. विशेषता, महानता ७. पतझड़ ८. बलिहारी ९. सत्य भावना १०. झूठ पाखण्ड।

पृष्ठ संख्या ६ का शेष भाग.....

घनिष्ठ सम्बन्ध थे और वे ऑक्सफोर्ड से शिक्षित-दीक्षित थे तथा उनकी विचारधारा के पोषक थे। वही उनके सबसे अनुकूल हो सकते थे, और अनुकूल सिद्ध हुए भी। भारत को स्वतन्त्र घोषित करने के बाद अंग्रेज भारत को इतनी सुविधा के साथ छोड़कर चले गये कि किसी अंग्रेज का बाल भी बाँका नहीं हुआ और अंग्रेजों की कोई सम्पत्ति यहाँ शेष नहीं रही। अपनी सारी सम्पत्ति और धन निकाल वो ले गये। यह सब नेहरू की कृपा से हुआ।

१५ अगस्त, १९४७ को आजादी मिलने के बाद अंग्रेज सरकार ने भारत को 'स्वायत्तशासी गणराज्य' घोषित करने के बजाय 'स्वायत्तशासी उपनिवेश' (डोमिनियन स्टेट) घोषित करने का प्रस्ताव रखा था। महात्मा गाँधी और सरदार पटेल इस प्रस्ताव के विरोध में थे, किन्तु पं. नेहरू ने उसको अपने आग्रह से स्वीकार कर लिया। उसका परिणाम यह रहा कि १५ अगस्त १९४७ से २६ जनवरी १९५० तक शासन तो मनोनीत भारत सरकार का रहा किन्तु संविधान ब्रिटिश सरकार का चलता रहा। भारत का राजा ब्रिटेन का राजा ही रहा। उसका प्रतिनिधित्व भारत का गवर्नर जनरल (महाराज्यपाल) कर रहा था। १९४७ से १९४८ तक भारत के गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन रहे और १९४९-१९५० में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी रहे। ये भारत के कार्यकारी राजा थे। इस बीच ब्रिटेन और उसके राजा का वर्चस्व बना रहा और अंग्रेज भारत से सुविधापूर्वक निकलकर चले गये। पाठक इस घटनाक्रम को स्मरण करें कि आजादी के नायक माने जाने वाले गाँधी जी १५ अगस्त १९४७ को भारत की स्वतन्त्रता की घोषणा किये जाने वाले महान् समारोह में उपस्थित नहीं थे। उसका कारण यह था कि उनका मानना था कि यह पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रदान करना नहीं है, अपितु मात्र सत्ता का हस्तान्तरण है, किन्तु पं. नेहरू ने उस स्थिति को स्वीकार कर लिया था। प्रतिवर्ष मनाये जाने वाले पर्व 'स्वतन्त्रता-दिवस' और 'गणतन्त्र-दिवस' हमें उपर्युक्त दु:खद स्थितियों की याद दिलाते रहेंगे तथा आजादी के इतिहास के नये तथ्यों का चिन्तन करने का माध्यम बनेंगे। -**डॉ. सुरेन्द्र कुमार**

आर्यजगत् के समाचार

१. प्रवेश सूचना- महात्मा सत्यानन्द मुंजाल आर्य कन्या गुरुकुल शास्त्री नगर, लुधियाना, पंजाब में सत्र २०१९-२० में आयु ९ से ११ वर्ष के मध्य छठी कक्षा में कन्याओं के प्रवेश हेतु नियमावली एवं पंजीकरण पत्र (मूल्य १००/- रु.) भरकर ३१ मार्च १९ तक गुरुकुल के कार्यालय में जमा करवाएँ (पंजीकरण पत्र डाक द्वारा भी प्राप्त किए जा सकते हैं)। कन्याओं की लिखित प्रवेश-परीक्षा ०७ अप्रैल २०१९ रविवार को प्रात: ८ बजे होगी। सफल कन्याओं का साक्षात्कार एवं स्वास्थ्य परीक्षण भी उसी दिन होगा। **सम्पर्क- ९८१४६२९४१०**

२. शिविर सम्पन्न- यज्ञशाला गुरुकुल लाडवा का ८३वाँ चरित्र निर्माण शिविर दि. ६ जनवरी २०१९ को सम्पन्न हुआ। शिविर उद्घाटन यज्ञ में जस्टिस प्रीतमपाल व श्रीमती माया यजमान रहीं। यज्ञ आचार्य कृष्णदेव ने सम्पन्न कराया। तत्पश्चात् सत्संग हुआ। शिविर में प्रवीण पाठक ने योग का प्रदर्शन किया।

३. वार्षिकोत्सव का आयोजन- गुरुकुल आश्रम आमसेना का ५१वाँ वार्षिक महोत्सव दि. १६ से १८ फरवरी २०१९ को हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। इस अवसर पर सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित हैं। **सम्पर्क- ९४३७०७०६१५**

चुनाव समाचार

४. आर्यसमाज हरजेन्द्र नगर (लाल बंगला) कानपुर, उ.प्र. का वार्षिक निर्वाचन दिनांक ०६/०१/२०१९ को श्री शंकर लाल आर्य की अध्यक्षता में निम्न पदाधिकारियों का निर्वाचन सम्पन्न हुआ। **प्रधान**- श्री राम आर्य, **मन्त्री**- श्री अजय गुप्ता, **कोषाध्यक्ष**- श्री प्यारेलाल आर्य को चुना गया।

५. आर्यसमाज रावतभाटा, कोटा, राज. के वार्षिक चुनाव हुए। श्री जे.पी. चौधरी को चुनाव अधिकारी नियुक्त किया गया, जिनकी देख-रेख में निम्न पदाधिकारियों का चुनाव किया गया। **प्रधान**- श्री नरदेव आर्य, **मन्त्री**- श्री ओमप्रकाश आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री रमेशचन्द्र भाट को चुना गया।

शोक समाचार

६. आर्यसमाज श्रीगंगानगर के पुरोहित, विद्वान्, लेखक श्री रामनिवास गुणग्राहक की माता **श्रीमती बासमती देवी** का दि. २२ जनवरी २०१९ को निधन हो गया है। दि. ८ जनवरी को उन्हें पक्षाघात हुआ था, जिसके कारण उनका निधन हो गया। परोपकारिणी सभा दिवंगतात्मा को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए प्रभु से परिजनों के लिये धैर्य की प्रार्थना करती है।

७. आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता, जयपुर निवासी श्री सत्यव्रत सामवेदी के पुत्र **श्री चक्रकीर्ति सामवेदी** का दि. १२ जनवरी २०१९ को ५१ वर्ष की आयु में असमय आकस्मिक निधन हो गया। श्री चक्रकीर्ति सामवेदी पूर्ण सक्रियता से आर्यसमाज के कार्यों में संलग्न रहते थे। प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगतात्मा को अपने सान्निध्य में स्थान दे व परिजनों को धैर्य व साहस प्रदान करे। परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रात: ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com